।। ओ३म् ।।

पाक्षिक

परोपकारी

• वर्ष ६० • अंक १५ • मूल्य ₹१५ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र • अगस्त (प्रथम) २०१८

स्वतन्त्रता दिवस की हार्दिक शुभकामनाएँ

भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में क्रान्तिकारियों के प्रेरक व गुरु

महर्षि दयानन्द सरस्वती

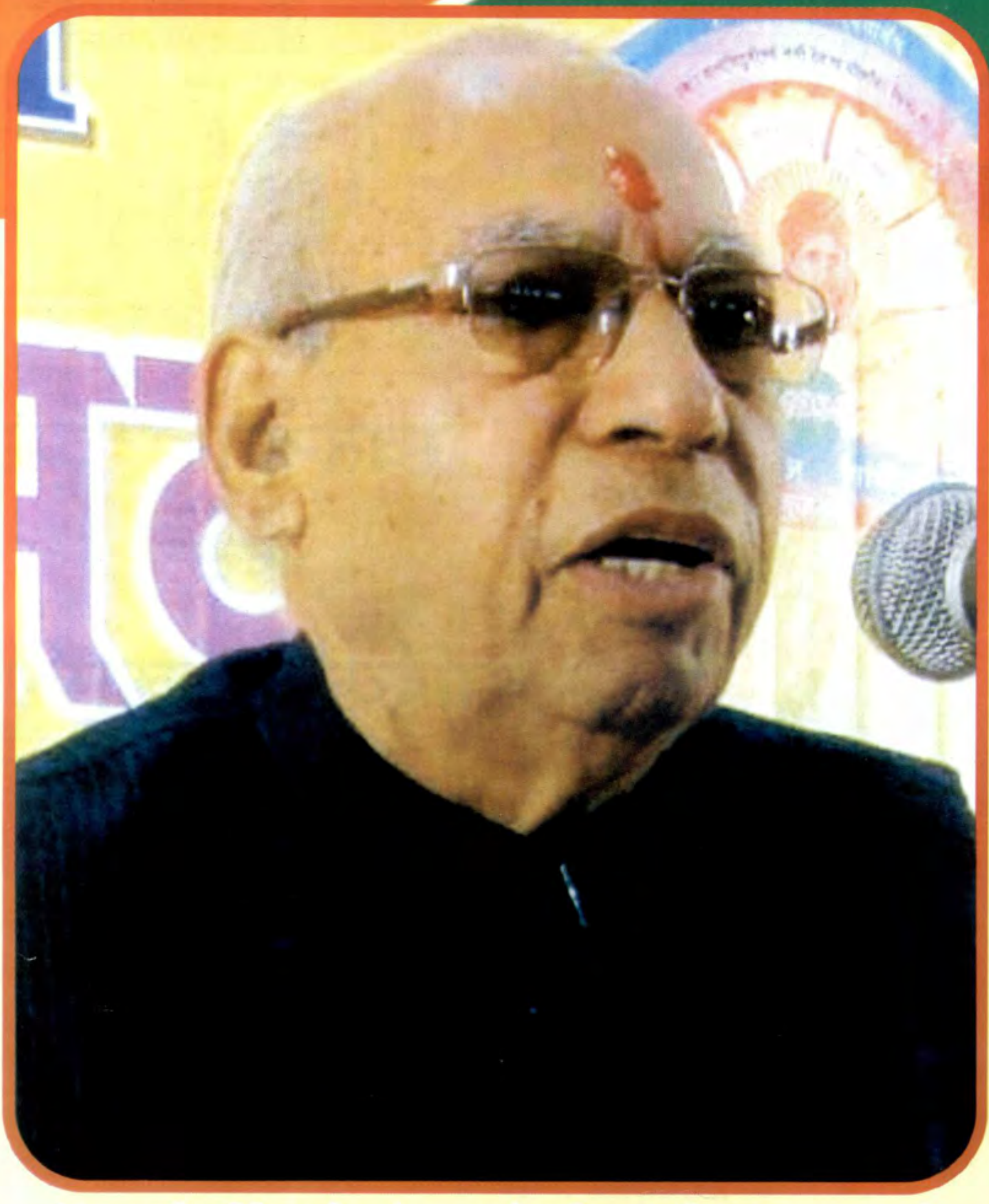

संस्कृत को जीने वाले, संस्कृत को परिवार की मातृभाषा बनाने वाले कवि, विद्वान्, गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक

डॉ. सुभाष वेदालङ्कार

को हार्दिक श्रद्धाञ्जलि

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ६० अंक : १५

दयानन्दाब्द: १९४

विक्रम संवत्: श्रावण कृष्ण २०७५

कलि संवत्: ५११९

सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११९

सम्पादक

डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३२

परोपकारी का शुल्क

भारत में

वार्षिक-२०० रु., द्विवार्षिक-३९० रु.
त्रिवार्षिक-५८० रु.
आजीवन (१५ वर्ष)-२००० रु.
एक प्रति - १५/- रु.

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर
द्विवार्षिक-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर
त्रिवार्षिक-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर
आजीवन (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.
एक प्रति - ३ पाउण्ड
एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

अगस्त प्रथम २०१८

अनुक्रम

०१. आर्य संगठनों की एकता	सम्पादकीय	०४
०२. धौलपुर सत्याग्रह शताब्दी यात्रा	लक्ष्मण जिज्ञासु	०६
०३. मृत्यु सूक्त-११	डॉ. धर्मवीर	०७
०४. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	१०
०५. ऋषि सान्दीपनि के शिक्षा-केन्द्र में	आ. उदयवीर शास्त्री	१५
०६. राष्ट्र की प्रगति में राष्ट्रभाषा...	डॉ. प्रभु चौधरी	२०
०७. 'नमस्ते' उपन्यास	रणजीत पांचाले	२५
०८. वैदिक पुस्तकालय के नये संस्करण		२७
०९. लौकिक एवं पारलौकिक सुखों....	प्रकाश चौधरी	२८
१०. शङ्का समाधान- ३०	डॉ. वेदपाल	३१
११. संस्था समाचार		३३
१२. वेदगोष्ठी-२०१८		३४
१३. गीता आर्यसमाजी हो गई	विवेकानन्द सरस्वती	३६
१४. आर्यजगत् के समाचार		४१

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

आर्य संगठनों की एकता

प्रत्येक पुरानी पड़ती जा रही वस्तु में विकृति और दुर्बलता का आना स्वाभाविक है। सृष्टि के प्रत्येक पदार्थ और विशेषत: प्राणियों के शरीर को देखते हुए हमें इसकी पुष्टि होती है। पदार्थों और जीवधारियों के शरीरों को विभिन्न व्यायामों, ओषधियों एवं अन्य चिकित्साओं द्वारा स्वस्थ रखने का प्रयत्न शास्त्रनिर्दिष्ट है। मानव-समूह भी विभिन्न व्याधियों से ग्रस्त होता है, ढोंग-पाखंड, अन्याय, अज्ञान-अविद्या इत्यादि उसके अंगों को जर्जरित और नष्ट कर देते हैं। ईश्वरीय व्यवस्था से विभिन्न कालों में न्यूनाधिक गुणों वाले महापुरुष ज्ञानी, नेता, शूरवीर, आचार्य इत्यादि के रूप में हमारे सम्मुख आते हैं और दुर्गुणों, दुर्नीतियों का अपनयन करके मानवजाति के उद्धार में सहायक बनते हैं। ऐसे व्यक्तियों की पहली स्वाभाविक विशेषता यह होती है कि वे स्वयं समर्थ होते हैं और दूसरी यह कि वे लोक में व्याप्त समस्याओं का सटीक निदान जानने वाला मस्तिष्क रखते हैं।

महापुरुषों की इसी शृंखला में महर्षि दयानन्द को पाते हैं, जो भारत के दीर्घकालीन इतिहास में अपनी अद्‌भुत प्रतिभा के कारण अद्वितीय स्थान रखते हैं और जिन्होंने मानव-समाज की बहुविध व्याधियों की अपनी प्रतिभा से सटीक चिकित्सा की, निदान प्रस्तुत किया। विभिन्न प्रकार के प्रक्षेपों से युक्त शास्त्रों का शुद्धीकरण किया; ऐतिहासिक, धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक समस्याओं को समझने और उनके उपचार के लिए वेदाधारित दिव्य दृष्टि प्रदान की। दयानन्द ऐसे महापुरुष और दिव्यद्रष्टा थे कि विदेशी शासन से सीधे टकराए बिना उसकी चूलें हिला दीं और अपने पश्चाद्वर्ती अनुयायियों को संघर्ष का खाका (रोड मैप) प्रदान किया। यहाँ तक कि आर्यसमाज की स्थापना के लिए उद्यत आर्यपुरुषों को चेतावनी देने से भी नहीं चूके कि **''आप यदि समाज से पुरुषार्थ कर परोपकार कर सकते हो, तो समाज कर लो। ......परन्तु इसमें यथोचित व्यवस्था न रखोगे, तो आगे गड़बड़ाध्याय हो जाएगा। ....यदि ऐसा न करोगे तो आगे यह भी एक मत हो जाएगा और इसी प्रकार से 'बाबा-वाक्यं प्रमाणम्' करके इस भारत में नाना प्रकार के मत-मतान्तर प्रचलित होके, लड़कर, नाना प्रकार की सद्-विद्या का नाश करके यह भारत दुर्दशा को प्राप्त हुआ है, इसमें यह भी एक मत बढ़ेगा। मेरा अभिप्राय तो ऐसा है कि इस भारतवर्ष में यदि नाना प्रकार के मत-मतान्तर प्रचलित हैं, तो भी वे सब वेदों को मानते हैं, इससे वेदशास्त्र-रूपी समुद्र में यह सब नदी-नाव पुन: मिला देने से धर्म-ऐक्यता होगी। और धर्म-ऐक्यता से सांसारिक और व्यावहारिक सुधारणा होगी....।''**

स्पष्ट है कि महर्षि सतत जागरुकता और समय-समय पर आत्मनिरीक्षण का सुझाव आर्यजनों को दे रहे हैं। महर्षि के सुयोग्य एवं तपस्वी-त्यागी उत्तरवर्ती आर्यजनों ने उनके निर्देशों का पालन कर मानवमात्र को **'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'** के उद्घोष के साथ एक-सूत्र में बाँधने के अथक प्रयास किए। राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक इत्यादि सभी क्षेत्रों में महर्षि के शिष्यों ने धूम मचा दी; आर्यसमाज की पताका को व्योमवर्तिनी बना दिया। विदेशी शासकों की नाक के नीचे, उन्हीं के कानूनों से उन्हें मात देते हुए आर्यों ने वैदिक सिद्धान्तों और स्वदेश-प्रेम का डंका बजाया।

एक घटना देखिए- लाहौर आर्यसमाज के सभासदों द्वारा विदेशी वस्त्रों के त्याग का संकल्प लिया गया था, जिसके विषय में तत्कालीन **स्टेट्समैन** नामक समाचार पत्र के 14 अगस्त, 1879 के अंक में लिखा था- **''भारत की वर्तमान अवस्था तेजी से बढ़ती हुई दरिद्रता की है। देश की इस अवस्था में, अपने धन्धों और उद्योगों की पुन: बहाली का प्रश्न जितना महत्त्वपूर्ण और रोचक है उतना अन्य कोई सामाजिक प्रश्न नहीं है, अत: विद्वान् मनीषी दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित, लाहौर आर्यसमाज के सदस्यों के कदम का संतोष के साथ अभिनन्दन उन सब लोगों को करना चाहिए जिनके हृदय में देश का हित है। आर्यसमाज भवन के परिसर में हुई एक बैठक में उन्होंने अंग्रेजी कपड़ों के उपयोग से विरत होने का निश्चय किया है। आगे से वे केवल भारत में बने कपड़ों का हठ रखेंगे। यदि वे अपने वचनों को क्रियान्वित कर सके और अन्य लोग उनके उदाहरण का अनुकरण कर पाये तो एक महान् लक्ष्य पूरा हो जाएगा। भारतीय बाजार में मैनचेस्टर के प्रभाव का जवाब देने का यह एक उपाय है।''** यह कांग्रेस की स्थापना और गांधीजी के स्वदेशी के मंत्र से बहुत पहले ही आर्यसमाज की पहल थी। 1911 के जनसंख्या कमिश्नर मिस्टर

ब्लण्ट ने भी यही लिखा था- **''आर्यसमाज के सिद्धान्तों में स्वदेश-प्रेम की प्रेरणा है। आर्यसिद्धान्त और आर्यशिक्षा समान रूप से भारत के प्राचीन गौरव के गीत गाते हैं और ऐसा करके वे अपने अनुयायियों में राष्ट्र के प्रति गौरव की भावना को जागृत करते हैं। इस शिक्षा के फलस्वरूप वे समझते हैं कि हमारे देश का इतिहास पराभव की कहानी नहीं है। देशभक्ति और राजनीति एकार्थवाची नहीं है, किन्तु राष्ट्रीय कार्यों में रुचि या प्रवृत्ति राष्ट्रीय भावना का स्वाभाविक परिणाम है।''**

लेकिन समय-समय पर आर्यसमाज के रोगों और दुर्बलताओं की चिकित्सा न होने से प्राकृतिक न्याय ने अपना काम किया और महर्षि की चेतावनी सार्थक हुई-**''धर्मगुरुओं और सामाजिक नेताओं की असावधानी, प्रमाद और आलस्य से भावना, भाव और भाषा आदि एकता के चिह्न बदल जाते हैं।''**

आज आर्यसमाज की फूट सबके सामने है। एक लक्ष्य- **'कृण्वन्तो विश्वमार्य्यम्'**, एक आचार्य-**दयानन्द**, एक धर्मग्रन्थ-**वेद** के होते हुए हम परस्पर विभाजित क्यों हैं; यह विचारणीय है।

पिछले दिनों गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार में आयोजित गुरुकुलों के सम्मेलन में आशा की किरण दिखाई दी जब विभिन्न सार्वदेशिक सभाओं के प्रमुखों ने एकता के लिए सहमति जताई। इसमें सम्भवतः स्वामी रामदेव जी का विशिष्ट योगदान रहा हो, जिन्होंने अपना प्रेरक उद्‌बोधन उक्त सम्मेलन में प्रस्तुत किया। यद्यपि स्वामी जी आर्यसमाज की किसी शीर्ष संस्था के पद पर नहीं हैं, परन्तु वे आर्यजगत् के बाहर भी विभिन्न मंचों से आर्यसमाज और ऋषि दयानन्द के सम्बन्ध में अपने उद्‌गार व्यक्त करते रहे हैं। इसके पीछे प्रमुख और स्पष्ट कारण यही है कि वे आर्यसमाज और आर्ष गुरुकुलों की ही उपज हैं। बाहर उन्होंने जो कुछ यश-कीर्ति प्राप्त की है, वह उनके अपने पुरुषार्थ का फल है। हाँ, उसके वैचारिक बीज-वपन का कार्य आर्ष पृष्ठभूमि में ही हुआ है।

स्वामी जी का आर्य संगठनों की एकता का आह्वान समीचीन है। अतः उनके भावप्रवण उद्‌बोधन का वहाँ उपस्थित सभी आर्य नेताओं ने स्वागत किया एवं प्रेरणा प्राप्त की है। विभाजित आर्य संस्थाओं के नेताओं ने एकता के लिए अपनी सहमति भी प्रदान की है। इससे आशा बँधती है कि आर्यजगत् एकता को प्राप्त करके पुनः संसार में अज्ञान, अविद्या, पाखण्ड, अन्याय एवं मानव में पारस्परिक द्वेष-भाव का नाश कर, वेद-ज्ञान एवं वैदिक धर्म का प्रचार करने में समर्थ होगा। आगामी आर्य महासम्मेलन से पूर्व यदि सम्पूर्ण आर्यजगत् एक-जुट होता है, तो संसार के लिए अतीव कल्याणकारी प्रयास होगा।

आज आर्यसमाज यद्यपि संख्याबल में पर्याप्त हैं, परन्तु बिखरे होने से उसकी शक्ति और उसके अस्तित्त्व को राजनीतिक, मीडिया-जगत् तथा अन्य धार्मिक और सामाजिक मंचों पर वह स्थान प्राप्त नहीं होता जिसका वह अधिकारी है। स्वाधीनता संग्राम की सबसे बड़ी धार्मिक, सामाजिक संस्था होने के उसके इतिहास का जनसामान्य को ज्ञान ही नहीं है। पाखंडों का खंडन करने वाली सबसे मुखर संस्था आज विभिन्न माध्यमों से पाखंडों को फैलता देख रही है, परन्तु अपने वर्तमान स्वरूप, सिद्धान्त और शक्ति के कारण उनका खंडन करने में असमर्थ है। कारण वही कि परस्पर वैमनस्य और फूट के कारण हम एकत्र नहीं हो पा रहे हैं। व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाएँ इतनी बलवती हो जाती हैं कि हमारे नेता संगठन को विस्तृत करने के स्थान पर संकुचित करने लगते हैं।

हम आशा करते हैं कि उक्त गुरुकुल सम्मेलन से विभिन्न नेतृत्वों की एकता का जो संदेश प्राप्त हुआ है और स्वामी रामदेव एवं अन्य आर्य नेताओं ने जो सत्प्रयास किए हैं, वे फलदायी होंगे और हम महर्षि के स्वप्नों को साकार करने की दिशा में अग्रसर हो सकेंगे।

कभी भी किसी मान्य आर्य पुरुष (नेता) को परस्पर विरोध व हानि करने की इच्छा यदि जगे, तो महर्षि के ये वाक्य ध्यान में अवश्य लाना चाहिए-

''सभा में हठ और दुराग्रह नहीं करना चाहिए। अपने पक्ष की पुष्टि में चाहे जितनी युक्तियाँ दो, परन्तु प्रकृति और हृदय में ऐंठन न आने दो। किसी बात को पकड़ कर ऐसा नहीं खींचना चाहिए कि परस्पर के भ्रातृ-भाव का तार ही टूट जाय। बहुमतानुसार जो मत उत्तीर्ण हो जाये उस पर फिर हठ नहीं करना चाहिए।''

आशा है, सर्वमान्य एक आर्य नेता के अधीन आर्यजगत् उन्नति को अवश्य प्राप्त करेगा और मानव-कल्याण में समर्थ होगा, अन्यथा नहीं। शास्त्र कहता है-

सर्वे हि यत्र नेतारः सर्वे पण्डितमानिनः।
सर्वे महत्त्वमिच्छन्ति तद्वृन्दमवसीदति।।

-दिनेश

धौलपुर सत्याग्रह शताब्दी यात्रा

लक्ष्मण जिज्ञासु

ऋषि दयानन्द ने जिस स्वप्न की पूर्ति के लिए आर्यसमाज के संगठन की स्थापना की, जो संगठन अल्प समय में ही देश को दिशा देने, देशवासियों को उनके उत्तम गौरवमय इतिहास से परिचित करा, सदियों से जिन धमनियों में रक्त का प्रवाह शिथिल हो गया था उनको अपने विश्व पथप्रदर्शक होने के गरिमामय इतिहास का स्मरण करा, वर्षों से गुलामी की जंजीरों में जकड़े देश को स्वतन्त्रता के प्रफुल्लित वन के उल्लासित वातावरण में विचरण कराने हेतु निमित्त हुआ, वही आर्यों का संगठन आज अपकर्ष की ओर निरन्तर अग्रसित हो रहा है।

जिस संगठन की वाणी अपने पूर्वजों के इतिहास को याद कर विश्व को आर्य बनाने के संकल्प को अंगीकार कर अपने ज्ञान, बल, पराक्रम से विश्वपटल को अपनी आभा से प्रकाशित कर रही थी, वेद के ज्ञान की व्याख्याओं और स्वर से विश्वगगन को जिसकी मधुर वाणी गुंजायमान कर रही थी, उसी ऋषि दयानन्द के प्यारे संगठन की वह गरिमा, वह श्री कहाँ विलुप्त हो गयी? सत्य ही है, उत्कर्ष के बाद पतन स्वाभाविक स्थापित नियम है, उससे कौन प्रभावित हुए बिना रह सकता है-

सर्वे क्षयान्ताः निचया पतनान्ताः समुच्छ्रयाः।
संयोगा विप्रयोगान्ता मरणान्तं च जीवितम्।।

परन्तु क्या हम लोग वर्तमान स्थिति को स्वीकार कर लें, क्या इसे दैव इच्छा मानकर उन्नति के मार्ग पर प्रशस्त न हों? क्या हम पुनः स्व-गौरव को प्राप्त करने का प्रयत्न न करें? ऋषि के गौरवमय संगठन के इस खण्डहर को पुनः आलोकित, पुनर्जीवित करने का प्रयास अवश्य होना चाहिए।

ऋषि के दीवानों को आवश्यक है कि कुम्भकर्ण की नीद से जागें, उन्नति के पथ पर अग्रसर हों, हमारे पास हमारा समृद्ध इतिहास है। ऋषि दयानन्द, पण्डित गुरुदत्त आदि का ज्ञानालोक, पण्डित लेखराम, स्वामी श्रद्धानन्द आदि जैसे अनगिनत ऋषि भक्तों का प्राणोत्सर्ग, स्वामी स्वतन्त्रतानन्द, पण्डित नरेन्द्र जैसी देश, धर्म के लिए कष्ट सहने की योग्यता एवं उनका तप, स्वामी दर्शनानन्द, पण्डित रामचन्द्र देहलवी जैसे विद्वानों की योग्यता एवं निर्मल चरित्र किस आर्यवीर की रक्तविहीन धमनियों में रक्त को प्रवाहित होने से रोक सकता है, वह कौन अभागा होगा जो मातृभूमि के इन प्रकाशपुंजों से स्व-हृदय में गौरव दीप को प्रज्वलित कर ऋषि दयानन्द के स्वप्न को साकार करने के लिए यज्ञाहुति देने के लिए तत्पर नहीं होगा।

मैथिलीशरण गुप्त ने लिखा है-

निज पूर्वजों के सद्गुणों का गर्व जो रखती नहीं,
वह जाति जीवित जातियों में रह नहीं सकती कहीं
किस भाँति जीना चाहिए, किस भाँति मरना चाहिए
सो सब हमें निज पूर्वजों से याद करना चाहिए

धौलपुर राज्य में जनता पर किये गए अत्याचारों के खिलाफ स्वामी श्रद्धानन्द जी ने जिस आन्दोलन का नेतृत्व किया, उस इतिहास की गौरवमयी घटना के १०० वर्ष पूर्ण होने पर श्रद्धेय राजेन्द्र जिज्ञासु जी की प्रेरणा एवं निर्देश से पण्डित लेखराम वैदिक मिशन ने निःशक्त समाज को पूर्वजों के त्याग बलिदान की गाथाओं को स्मरण करा पुनर्जीवित करने के उद्देश्य से ''धौलपुर सत्याग्रह शताब्दी'' मनाने का निर्णय किया है।

पृष्ठभूमि- धौलपुर आर्यसमाज ऋषि दयानन्द के समय में राजस्थान में स्थापित आर्यसमाजों में से एक है। ऋषि दयानन्द से प्रेरणा प्राप्त कर, स्वराज्य ही सर्वश्रेष्ठ है और परतन्त्रता के बन्धनों में स्वधर्म-रक्षा सम्भव नहीं, ऐसा दृढ़ निश्चय कर अनेकों युवक इस जागृति को लाने के लिए प्रयत्नरत हो गए। सन १८८० में बाबू यमुनाप्रसाद वर्मा के द्वारा धौलपुर में आर्यसमाज की स्थापना हुई।

शनैः शनैः आर्य समाज का प्रभाव रियासत और अंग्रेजों की आँखों में खटकने लगा। सत्य ही है, निरंकुश और नीतिहीन शासन और अत्याचार एक-दूसरे के पूरक हैं। परिणामतः आर्यवीरों पर अत्याचार होना स्वाभाविक ही था।

अंग्रेजों और रियासत ने अपने पतन के लिए उग्र होते इस दावानल को समाप्त करने के लिए दमनचक्र प्रारम्भ

शेष भाग पृष्ठ संख्या ४० पर....

मृत्यु सूक्त-११

प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर
लेखिका - सुयशा आर्या

**परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां, यस्ते स्व इतरो देवयानात्।
चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि, मा नः प्रजां रीरिषो मोत वीरान्।।**

ये जो वेद ज्ञान का प्रसंग है, जिसमें हम ऋग्वेद के १० मण्डल के १८ वें सूक्त की चर्चा कर रहे हैं। हमारी चर्चा का केन्द्र बिन्दु है उसका पहला मन्त्र। हमने मृत्यु पर विचार करते हुए, मृत्यु हमारे साथ कैसे जुड़ी हुई है, अर्थात् किसकी मृत्यु हो रही है और किसकी नहीं हो रही है, ये विचार हमने पिछले सन्दर्भों में किया। हमने यजुर्वेद का एक मन्त्र इस विषय में देखा था- **वायुरनिलममृतमथेदम्भस्मान्तं शरीरं। ओ३म् क्रतो स्मर, क्लिबे स्मर, कृतं स्मर**। इसमें पहले भाग की चर्चा में हमने देखा था कि शरीर के साथ क्या करना चाहिए, शरीर के साथ क्या नहीं करना चाहिए। अगले भाग में बताया गया है कि फिर आत्मा के साथ क्या करना चाहिए। क्योंकि जो कुछ शरीर के साथ आपने किया वो तो यहीं रह जाएगा। आपने शरीर के लिए पलंग बनाया था, वह यहीं रह जाता है, शरीर जाता तो पलंग भी जाता। आप भले ही श्राद्ध के दिन पलंग देते हों, लेकिन क्या वो आत्मा अब तक बिना पलंग के ही रहा? जिस शरीर के लिए आपने किया, वो यहाँ था, कपड़े थे, भोजन था, आसन था, घर था और इतना ही नहीं, जब तक इस शरीर में जीवात्मा रहता है, तब तक ही यह शरीर पवित्र है।

इस शरीर में जो कुछ अच्छा-बुरा है, वो तो जीवित दशा में भी है। इसके अन्दर खून है, मांस है, मज्जा है, मल है, सब कुछ इस जीवित शरीर में भी है, लेकिन आप इसे उस तरह से अपवित्र नहीं मानते। जैसे ही इसमें से जीवात्मा निकल जाता है, तो सारा शरीर अपवित्र हो जाता है। इतना ही नहीं, इसके साथ की वस्तुएं भी अपवित्र लगती हैं। इसके कपड़ों को भी फेंक देते हैं, इसके बिस्तर को भी फेंक देते हैं और यदि पता लग जाए कि यह आदमी मरने वाला है तो उसे खाट से नीचे उतार लेते हैं। खाट पर मरेगा तो खाट भी जाएगी, इसलिए उसको नीचे उतार लेते हैं, जमीन पर लिटा देते हैं ताकि कोई चीज खराब न हो, और यदि हो ही जाती है तो जो कुछ भी है उसको बाहर कचरे में डाल देते हैं, फेंक देते हैं। तो आत्मा के कारण से इस शरीर में, इस शरीर की वस्तुओं में पवित्रता है। पवित्रता का मूल कारण आत्मा है। जब आत्मा नहीं रहा तो इसकी कोई भी बची हुई चीज पवित्र नहीं होती। इसलिये उसे त्याग देते हैं, छोड़ देते हैं, दे देते हैं।

जो लोग यह समझते हैं कि मृत्यु दुःख का कारण है, उनको आप समझाओ या आप स्वयं समझो कि यदि मृत्यु दुःख का कारण होती तो हर मृत्यु में दुःख होता, पर ऐसा तो होता नहीं है। निकटवर्ती की मृत्यु में दुःख होता है, हमारे संबन्धी की मृत्यु में दुःख होता है, लेकिन पराये व्यक्ति की मृत्यु में कोई दुःख नहीं होता, शत्रु की मृत्यु में कोई दुःख नहीं होता। वैसे ही अपने यहाँ संतान उत्पन्न होती है तो प्रसन्नता होती है, दूसरे के यहाँ उत्पन्न होती है तो न प्रसन्नता होती है, न अप्रसन्नता होती है और शत्रु के यहाँ उत्पन्न होता है तो दुःख होता है। इसलिए जन्म और मृत्यु से सीधा कोई सुख या दुःख का संबन्ध नहीं है। यदि संबन्ध होता तो हर मृत्यु से दुःख होना चाहिए था और हर जन्म से सुख होना चाहिए था, किन्तु किसी के जन्म से सुख होता है, किसी की मृत्यु से सुख होता है। सोचते हैं कि दुष्ट था, मर गया, दुश्मन था मर गया। इसलिए मृत्यु और जन्म वास्तव में दुःख और सुख के कारण नहीं हैं, दुःख का कारण उनका संबन्ध है। जिससे जितना अनुकूल संबन्ध है उसकी मृत्यु से उतना दुःख होगा, जिससे प्रतिकूलता या उदासीनता है उसकी मृत्यु से दुःख नहीं होगा, होगी तो प्रसन्नता होगी।

एक और चीज विचारने की है, आप किसी की मृत्यु से क्यों दु:खी हैं? तो कहते हैं बहुत प्यार करते थे इसलिए दु:खी हैं। प्यार किससे करते थे आप? जीवात्मा से करते थे या शरीर से करते थे? यदि आप शरीर से प्यार करते थे तो उसे रख लेते, पर क्या आपका काम चल जाता? नहीं। जैसे ही जीवात्मा निकल जाता है, आप कहते हैं कि अब यह हमारा कुछ नहीं है। इसलिए आप जीवित से प्रेम करते हैं, मरे से नहीं। मरे के प्रति तो कर्त्तव्य करते हैं। जला देना चाहिए, शुद्धि कर लेनी चाहिए, उनकी स्मृति रख लेनी चाहिए, ये कर्त्तव्य हैं। इस दृष्टि से आप शरीर से प्रेम नहीं करते, शरीर के अन्दर विद्यमान जीवात्मा से करते हैं।

यहाँ एक बात और विचारने की हो सकती है- क्या जीवात्मा मर गया? जीवात्मा न पैदा होता है ना मरता है। मरना और पैदा होना जीवात्मा का धर्म नहीं है, ये शरीर का धर्म है, और शरीर से हमारा प्रेम नहीं है। प्रेम जीवात्मा से है, फिर हमें दु:ख क्यों होता है? आप कहते हैं, मरने वाला गया इसलिए दु:ख होता है। मरने वाला यहाँ से अच्छी जगह जाएगा या बुरी जगह जाएगा? परमेश्वर की व्यवस्था के अनुसार अच्छी ही जगह जाएगा। उसके श्रेष्ठ कर्म हैं तो अच्छी योनि में जाएगा। अच्छे घर में जन्म लेगा, नई आयु लेगा, नया शरीर लेगा, नए वातावरण में जाएगा। यहाँ बूढ़े, जर्जर, दु:खी शरीर को छोड़कर दु:ख से दूर हुआ है, आप क्यों रोते हैं? क्योंकि परमेश्वर कभी अनुचित नहीं करता, गलत नहीं करता, वो हमसे ज्यादा उसका सगा (हितैषी) है। हम तो उसके केवल उतने हैं जितना स्वार्थ है। हम वास्तव में इसलिए नहीं रोते कि हम उससे प्रेम करते हैं, हम इसलिए रोते हैं कि हमारे स्वार्थ का हनन होता है। हमारा स्वार्थ पूरा नहीं होता, हमारा स्वार्थ टूट जाता है। आज के बाद हम किसको अपना दु:ख सुनायेंगे, किससे हम सहायता लेंगे, कौन हमें प्रेम करेगा, किसको हम चाहेंगे, यह मूल झगड़ा रहता है।

महात्मा बुद्ध के जीवन में एक रोचक तथ्य आता है कि जब वो प्रसिद्ध हो गए और उपदेश देते हुए घूमने लगे तो एक ऐसा व्यक्ति था, जिसका केवल एक बालक था, वो भी १०-११ वर्ष का। वो उस बालक से बहुत प्रेम करता था। उसके परिवार में और कोई नहीं था, वो उसके बिना न खाता था, न सोता था, न रहता था, वो सदा उसके साथ रहता था। दुर्भाग्य से बालक एक दिन मर गया। उसे किसी साँप ने काट लिया था। अब मोह के कारण वो उसे जलाने न दे, उसकी अन्त्येष्टि न करने दे, उसको लिपट कर रोए। अब रोए, यह तो ठीक है, लेकिन गाँव वाले यह तो नहीं बर्दाश्त कर सकते कि अन्त्येष्टि ही ना हो। उन्होंने उसे अलग किया, वो बेहोश हो गया। गाँव वालों ने शव को जला दिया। अब यह पागल हुआ घूमने लगा। मेरा बेटा! मेरा बेटा! ऐसे ही बहुत जगह घूमता फिरता था। किसी ने कहा कि यहाँ भगवान् बुद्ध के शिष्य आए हुए हैं, जा उनसे मिल, वो तेरा भला करेंगे। वो उनके पास गया। उन्होंने कहा भाई! मरे को तो कौन लौटा सकता है। वह इस उधेड़बुन में घूम रहा था तो थककर सो गया। सोते हुए उसने क्या देखा कि स्वर्ग के अन्दर बगीचे में कुछ बच्चे खेल रहे हैं और उन बच्चों में उसका बेटा भी है। वो भागा-भागा बच्चे के पास जाता है, नाम लेकर पुकारता है, बेटा! बेटा! बेटा! कोई सुनता ही नहीं। जब वो आग्रह करता है, उसे पकड़ता है, उसे पकड़ना चाहता है, उसे अपने गले से लगाना चाहता है तो वह बच्चा झटक देता है और कहता है-कौन हो? कहाँ से आए हो? क्यों आए हो? वह कहता है, तुम मेरे बेटे हो, मैं तुम्हारा पिता हूँ। वह बोला यहाँ कोई बेटा, कोई पिता, कोई संबन्ध नहीं है। मैं नहीं जानता किसी को भी। मुझे किसी की भी आवश्यकता नहीं है। मैं यहाँ प्रसन्न हूँ। इतने में उसकी नींद खुल जाती है। वह अपने स्वप्न पर विचार करता है। उसे रहस्य समझ में आता है कि सारा दु:ख उसके मोह का है। यहाँ से जाने वाला आपको याद करे यह आवश्यक नहीं है। उसकी नई परिस्थिति है, नई दुनिया है, नई व्यवस्था है।

भगवान् ने ऐसा नहीं कर रखा कि यहाँ का दु:ख आप लेकर जाओ और याद करते रहो। भगवान् ने हमारे लिए एक बहुत अच्छा उपाय कर रखा है कि हम भूल जाते हैं। हम जीवन में भी भूल जाते हैं और मरने के बाद पिछला जन्म भी भूल जाते हैं। बहुत सारे लोग पूछते हैं जी, पिछला जन्म याद क्यों नहीं रहता? भइया, याद रहता तो क्या करता? पुरानी दुश्मनियाँ याद करता, पुरानी दोस्ती

याद करता, पुराने माता-पिता याद करता, पुराने भाई-बहन याद करता, फिर इस दुनिया में कौन किसका भाई होता और कौन किसकी बहन होती? सब घालमेल हो जाता। कोई इस जन्म में बहन है, कोई उस जन्म में पत्नी है, कोई उस जन्म में पिता है, कोई इस जन्म में बेटा है, आप किसको क्या बना देते। ये तो अच्छा है कि पिछले सारे संबन्ध समाप्त हैं और जो भी संबन्ध हैं, इस जीवन के हैं। जब तक ये जीवन है, तब तक ये संबन्ध हैं, और जैसे ही यह जीवन समाप्त हो जाएगा, संबन्ध भी समाप्त हो जायेंगे। इसलिए अगर आप यह सोचो कि मेरे संबन्ध बने रहेंगे और इसलिए मैं उनके लिए कुछ करूँगा या मैं उनके लिए रोऊँगा तो यह मिथ्या है, अनुचित है, गलत है।

वास्तव में मेरा रोना मेरे स्वार्थ के लिए होता है, क्योंकि जीवात्मा तो मरा ही नहीं, जीवात्मा यहाँ से बुरी जगह गया नहीं और जो व्यवस्था मैं कर सकता हूँ, परमेश्वर उससे अच्छी व्यवस्था कर सकता है, करता है। जब वह परमात्मा की ही व्यवस्था में गया है, तो मैं यह कैसे कह सकता हूँ कि वह दु:ख में गया है। मैं उसका बेटा हो सकता हूँ, मैं उसका पिता हो सकता हूँ, लेकिन परमेश्वर तो सबका पिता है। सारे ही प्राणी उसके पुत्रवत् हैं। अन्तर कितना है? अन्तर थोड़ा सा है। किसी के जाने से रोने का संबन्ध क्या है? मेरा बच्चा स्कूल जाता है, विद्यालय जाता है, कॉलेज में पढ़ने जाता है, दूर किसी कंपनी में काम करता है, किसी जगह पढ़ता है, तब तो मुझे कुछ ज्यादा दु:ख नहीं होता। मैं सोचता हूँ वो अच्छे के लिए गया है, मैं जानता हूँ वो लौटकर आ जाएगा, इसलिये जब चाहूँ मिल आऊँगा, जब मैं चाहूँगा मेरे पास है। दूर होने पर भी मेरी सीमा में है, मेरी पकड़ में है, मेरी पहुँच में है। इसलिये मुझे दु:ख नहीं है, लेकिन मृत्यु में मुझे दु:ख होता है, क्योंकि जो वस्तु है वो मेरी पकड़ से बाहर चली जाती है। जैसे एक बच्चा स्कूल जाता है, माँ छोड़कर आती है, दोपहर तक आ जाता है, माँ को जाने का, आने का, ना कोई दु:ख है ना कोई सुख है। प्रतिदिन का काम है, जाता है-आता है। जब तक जाने के बाद आने का विश्वास है, तब तक दु:ख का कोई कारण हमें नहीं लगता। हमें दु:ख तब होता है जब कोई जाकर न आ सके, या जाने के बाद हम उसे न पा सकें। इसलिए हमें मृत्यु के बाद ऐसा लगता है कि ये चीज़ हमारी पकड़ से बाहर चली गई है, हमारी पहुंच से बाहर हो गई है, अब यह हमारे पास लौटकर नहीं आएगा, यही हमारे लिए वास्तव में दु:ख का कारण होता है और यह परिणाम होता है मोह का, आसक्ति का, स्वार्थ का, लाभ का।

मूल समझने की बात ये है कि जन्म आपकी व्यवस्था से नहीं हुआ है। जन्म में आपको बुद्धिमान् संतान मिली, बलवान् मिली, सुंदर मिली, कुरूप मिली, कैसी भी मिली, आपकी इच्छानुसार तो नहीं मिली। लेकिन जो मिली आपने उसे स्वीकार कर लिया, उसे अपना बना लिया, वही आपको सुन्दर लगी, वही आपको बुद्धिमान् लगी, वही आपको अपनी लगी, वही आपको अच्छी लगी। तो जब, वो व्यवस्था आपकी इच्छा से नहीं हुई तो जाने की व्यवस्था भी उसकी ही है, उसी के अधीन है। लेकिन, हमने उस व्यवस्था को अपना अधिकार मान लिया, हमारी इच्छा मान लिया, हम जैसा चाहें वैसा कर सकते हैं-ऐसा मान लिया। इसलिये जब हम छोड़ते हैं और जब कोई हमसे छीनता है, तो हमें कष्ट होता है, बस इतना सा अन्तर है।

चाहे वह हमारा देह हो, चाहे वो हमारा पुत्र हो, चाहे हमारा पिता हो, चाहे हमारा मित्र हो, जब हम इच्छा से छोड़ते हैं, तब दु:ख का कोई कारण नहीं होता और जब बलपूर्वक हमसे कोई छीनता है, तो हमें कष्ट होता है। छोटी-सी वस्तु के साथ भी ऐसा ही होता है। जब किसी बालक से कोई खिलौना आप छीनना चाहते हैं, तो वो देना नहीं चाहता, वो रोता है, उसे दु:ख होता है। लेकिन वही बालक खेलते हुए खिलौने को फेंककर चला जाता है, तब तो उसे कोई दु:ख नहीं होता, तब उसे कोई परेशानी, कोई कष्ट नहीं होता। वैसे ही हमारे लिए मृत्यु दु:ख का कारण बनी ही इसलिए कि जो चीज़ हमारे अधिकार क्षेत्र की नहीं है, उसे हमने अपने अधिकार क्षेत्र में स्वीकार कर लिया। जो व्यवस्था हमारी नहीं है, हमने उस व्यवस्था को अपना बना लिया, इसलिए हमको कष्ट होता है। यदि यह बात हमारी समझ में आ जाए तो हम इस दु:ख से बच सकते हैं।

कुछ तड़प-कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

लाला साईंदास की सूझबूझ से- आर्यसमाज के आरम्भिक काल के एक कर्णधार लाहौर आर्यसमाज के प्रधान अपनी प्रशासनिक प्रतिभा के कारण उस युग में आर्यसमाज में ही नहीं, पूरे पंजाब में बहुत आदरणीय माने जाते थे। वे राजकीय सेवा में थे, परन्तु प्रखर देश-भक्त और स्वदेशी का मूर्त स्वरूप थे। महर्षि ने कविराज श्यामलदास जी को अपना ईंट-पत्थर का स्मारक-समाधि आदि न बनाने का कड़ा निर्देश दिया था। ऋषि ने कहा, यही जड़-पूजा की जड़ है अत: अपनी अस्थियों की राख को खेतों में डालने का आदेश दिया। इस पर आर्य कवियों ने बहुत भावपूर्ण गीत रचे।

ऋषि के पश्चात् राजस्थान के कुछ श्रद्धालु परोपकारिणी सभा पर उनकी समाधि आदि बनाने का बहुत दबाव डाल रहे थे। यह लाला साईंदास ही थे जिन्होंने सूझबूझ से अस्थियों को ऋषि उद्यान में दबाने की बात मनवाकर यह विपदा टाली। इस घटना का उल्लेख पहली बार इस सेवक ने 'स्वामी श्रद्धानन्द जीवन-यात्रा' ग्रन्थ में सप्रमाण विस्तार से दिया है। तब लाला जी महात्मा मुन्शीराम जी व लाला देवराज को इस सङ्कट को टालने के लिये अजमेर बैठक में साथ लाना चाहते थे। जालन्धर समाज के उत्सव के कारण वे तो न आ सके, परन्तु वे ला. साईंदास जी के साथ खड़े थे सो बात बन गई।

अनुवादक साईंदास जी- ला. साईंदास जी प्रबन्ध-पटु तो उत्तम कोटि के थे, परन्तु भाई परमानन्द जी के अनुसार वे ऊँची योग्यता के व्यक्ति नहीं थे, कोर्ट में अनुवादक थे। उन्होंने अपने १२-१३ वर्ष के सार्वजनिक जीवन में कभी किसी सभा में व्याख्यान नहीं दिया। कोई लेख नहीं लिखा। आपने एक पुस्तिका **'एक आर्य'** का सम्पादन अवश्य किया। इसकी संक्षिप्त भूमिका और अन्त में सार अथवा निष्कर्ष दिया। उर्दू पर उनका असाधारण अधिकार था। यह पुस्तक उसी युग में खप गई, फिर बीसवीं शताब्दी में कहीं भी एक प्रति न देखी गई।

जब पं. युधिष्ठिर जी मीमांसक की अन्तिम वेला में यह लेखक उनका पता करने बहालगढ़ गया तो आपने हमें इसके दर्शन करवाने को कहा। हमने उत्तर में कहा, ''गुरुजी! जब मिलेगी तो पहले आप ही को दिखाऊँगा।'' यह प्रसंग बहुतों को ज्ञात है। ईश्वर की असीम कृपा से यह दुर्लभ पुस्तिका अकस्मात् बहुत चमत्कारिक ढंग से हमें मुरादाबाद में मिल गई। पण्डित जी ने मृत्यु से पूर्व हमें एक आदेश दिया कि यह पुस्तक ला. साईंदास द्वारा लिखित हो ही नहीं सकती। वे इतने विषयों के गम्भीर विद्वान् नहीं थे। वे दर्शन, व्याकरण, उपनिषद्, स्मृतियाँ क्या जानें? ये उत्तर किसी ने महर्षि से पूछकर ही इसमें दिये हैं। यह आर्यजगत् को बता देना।

हमने इस पुस्तक का अनुवाद व सम्पादन करके छपवा दिया। हमारे एक कृपालु ने एक अभियान छेड़ दिया कि नहीं यह ला. साईंदास जी लिखित ही है। हमने उत्तर में लिखा 'मुसन्निफ़' (लेखक) के रूप में इस पर कहीं उनका नाम छपा ही नहीं। एक स्थान पर 'मुअल्लिफ़' अवश्य लिखा मिलता है। इस अरबी शब्द का अर्थ ही 'संग्रह करके सम्पादन करने वाला' है। दूसरा कोई अर्थ है ही नहीं।

एक नई बात सुनिये- आलोचक को कुछ भी कहने का अधिकार है। आर्यसमाज में ऐसे अनेक महानुभाव हैं जो घर में ही दिग्विजय करते रहते हैं। पराये लोगों से कभी टकराते देखे नहीं गये। हमने अनेक वर्ष इस पुस्तिका की खोज में लगाये, परन्तु यह कहीं भी न मिली। अब ५० वर्ष के पश्चात् २ जुलाई को अपने पुस्तकालय को ठीक-ठाक करते हुए अकस्मात् पता चला कि यह तो बहुत पहले से एक जिल्द (संग्रह) में हमारे पास थी। लगता है कि गंगोह के दानी ज्ञानी ला. रहतूलाल जी की ज्ञान-सम्पदा से हमें प्राप्त हुई थी। उस जिल्द के अन्त में यह थी। हम पहले की पुस्तकों को ही देखते रहे। इसे देखा ही नहीं।

अब यह नोट कीजिये- अभी हमने इसे अपनी मुरादाबाद वाली प्रति से नहीं मिलाया, परन्तु निश्चित रूप से यह उससे पहले या पीछे छपा संस्करण है। ऊपर

प्रकाशन का वर्ष ही नहीं छपा मिलता। इसके भी न प्रथम पृष्ठ पर और न भूमिका के पश्चात् तथा न निष्कर्ष के पश्चात् और न पुस्तक के अन्त में किसी लेखक का नाम छपा है। न ही 'मुअल्लिफ़' शब्द इसमें छपा मिलता है। मुरादाबाद वाली कॉपी में एक स्थान पर भूमिका की समाप्ति पर 'सीन' 'दाल' उर्दू का 'स' व 'द' अक्षर (साईंदास) तो मिलते हैं। इसमें ये भी नहीं। ज्ञानपिपासु आर्यजनों की सेवा में हमने यह नई जानकारी रखना अपना कर्त्तव्य जाना। हमारे वह कृपालु, लेखक और वे सब सम्पादक, संचालक जो हमें झुठलाने के लिये और पं. युधिष्ठिर जी मीमांसक सरीखे ज्ञानसमुद्र को नीचा दिखाने के लिये अपने पत्रों में हमारे कृपालु के लेख छापते रहे, उन्हें हम सादर निमन्त्रण देते हैं कि वे हमारे निवास पर दर्शन देवें और यह नई दुर्लभ प्रति अपनी आंखों से देख लेवें। जिहादी-जोश से चाँदापुर शास्त्रार्थ और 'एक आर्य' पर निब घिसाने वाले कृपालु का भी हम हार्दिक स्वागत करेंगे। देखें वह कब दर्शन देते हैं।

इस नई खोज-इस पुस्तिका की प्राप्ति का श्रेय भी हम पूज्य मीमांसक जी को ही देते हैं। तिनके की ओट में पहाड़ छिपा था हमें ज्ञात नहीं था। प्रभु का धन्यवाद, वह दीख गया।

राजा राममोहन राय क्या ईसाई बन गये?- '**इतिहास बोल पड़ा**' पुस्तक में हमने अमेरिका की एक प्रख्यात मैगज़ीन में प्रकाशित किसी भारतीय महापुरुष पर प्रथम लेख दिया है। उस लेख के लेखक ने ब्राह्म समाज, प्रार्थना समाज आदि को ईसाई मत व पश्चिम की देन माना है, परन्तु आर्यसमाज को विशुद्ध स्वदेशी व हिन्दू सुधारक संगठन माना है। ब्राह्म समाज को प्राय: सब इतिहासकारों ने ईसाइयत के रंग में रंगा सम्प्रदाय माना है। केशवचन्द्र सेन की ईसा भक्ति को तो एक संसार जानता है, परन्तु राजा राम मोहनराय तो अपने आरम्भिक जीवन में पादरियों के विरुद्ध लिखित व मौखिक युद्ध-करते रहे। हम ईसाई-मत के खण्डन में उनके लेखों से कुछ अंश कभी उद्धृत करेंगे।

श्री पं. चमूपति जी ने तो उन पर ईसाइयत के प्रभाव के प्रतिवाद में एक लेख में लिखा है कि इंग्लैण्ड में निधन के समय उनके शरीर पर यज्ञोपवीत था। उसका फोटो भी लिया गया।

अब एक सर्वथा नया तथ्य हमारे सामने आया है। हम चाहते हैं कि कोई गुणी सज्जन इस पर और प्रकाश डालें। श्री मेहता राधाकिशन लाहौर वाले आर्यसमाज के आरम्भिक काल में ब्राह्मसमाज पर एक प्रामाणिक लेखक या विशेषज्ञ माने जाते थे। आपने इस संस्था पर कई लेख व पुस्तकें लिखी थीं। आपने सन् १८८८ में '**ब्राह्मसमाज की असलियत**' नाम से एक ४० पृष्ठ की पुस्तिका के पृष्ठ ९ पर यह लिखा है, "हम मानते हैं कि इंग्लैण्ड जाने के पश्चात् राजा राम मोहनराय का विश्वास वेदों पर नहीं रहा था तथा वह सम्भवत: वहाँ ईसाई हो गये थे। कारण? विलायत पहुंचने के पश्चात् Unitarian Church यूनिटेरियन चर्च की ओर से जो मान-पत्र उन्हें भेंट किया गया, उसमें ईसाई मतानुयायी होने पर उन्हें बधाई दी गई। राजा राम मोहनराय ने धन्यवाद देते हुये इस कथन का प्रतिवाद नहीं किया कि मैं न ईसाई हूँ और न ईसाई मत का अनुयायी हूँ।"

ब्राह्मसमाज के सहयोग से सन् १९०९ में प्रयाग से जो "English Works of Rajarammohan Roy" नाम का ऐतिहासिक ग्रन्थ छपा था, वह हमारे पास है। उसमें ऐसी कोई चर्चा नहीं मिली। एक बार फिर इसे ध्यान से पढ़ेंगे। इतिहासप्रेमी, धर्मप्रेमी, स्वाध्यायशील सज्जन इस पर और प्रकाश डालेंगे तो हमें हर्ष ही होगा।

इतिहास बोध भी तो हो- जब किसी दुर्लभ पुस्तक अथवा अप्राप्य दस्तावेज़ की हमारे किसी लेख व पुस्तक में प्रेमी बन्धु चर्चा पढ़ते हैं तो उसका ज़ीरॉक्स माँग लेते हैं। यह कठिन कार्य हर बार तो करना कठिन है। इससे लाभ भी क्या? हमने 'अवध रिव्यू' मासिक में सर प्रताप सिंह की जीवनी छपने की चर्चा छेड़ी। उसे ऋषि जीवन में स्कैनिंग करके दे दिया। उस पर अपनी धारदार टिप्पणी भी दे दी। उसमें न ऋषि के जोधपुर आगमन की चर्चा है और न ही आर्यसमाज पर एक शब्द छपा मिलता है।

इसे पढ़कर मान्य लक्ष्मीचन्द जी ने इसकी माँग कर दी। वह तब हिण्डौन से छपे हरविलास शारदा जी के ऋषि जीवन का अनुवाद कर रहे थे। उनकी माँग पूरी कर दी।

उसमें उस लेख का फोटो तो दिया है, परन्तु आदरणीय लक्ष्मीचन्द जी ने उस पर एक वाक्य भी नहीं लिखा। कोई प्रतिक्रिया देते तो लाभ भी होता। यह document दिया किस प्रयोजन से? एक अन्य भाई ने हमसे एक ऐतिहासिक कृति माँगी। हमने पूछा, आप क्या करेंगे? इसके महत्त्व को, तत्त्व को समझने का इतिहास-बोध है क्या?

एक ने धूमधड़ाके से हमारे इस कथन का खण्डन कर दिया कि लाला जियालाल जैनी की पुस्तक का नाम **दयानन्द छलकपट दर्पण** था न कि '**दयानन्द चरित्र दर्पण**'। उस कृपालु ने लिखा कि दूसरे संस्करण में यही नाम था जो भारतीय जी ने लिखा है। दूसरे संस्करण में भी वही नाम था जो हमने लिखा है। हमने दूसरा संस्करण परोपकारिणी सभा को भेंट कर दिया। यदि आगे जाकर नये प्रकाशक को नाम बदलना पड़ा तो इससे लेखक का क्या लेना-देना? वह तो अधिकार दे गया था।

हमने अपने ग्रन्थ में जियालाल जैनी द्वारा महर्षि की महानता, विद्वत्ता व जाति-रक्षा के लिये की गई सेवाओं का जो वर्णन किया है उसे तो मुखरित न किया गया। इतिहास-बोध न होने से ये लोग यशस्वी इतिहासकार ईश्वरीप्रसाद के लेख का भी लाभ न उठा सके। पादरी स्कॉट व सर सैयद की आरती उतारने में ही लगे रहे। किसी नामी इतिहासज्ञ से डॉ. ईश्वरीप्रसाद की विद्वत्ता व स्थान पूछो।

ऋषि पर नया दोष लगा दिया- एक प्रश्न किसी ने पूछ लिया है कि जोधपुर में महर्षि ने जो नन्हीं वेश्या के लिये कठोर शब्द प्रयोग किये, एक महात्मा जी ने इसे वाणी की हिंसा बताते हुये इसी को उनके विषपान व मृत्यु का कारण बताया है। कोई योगदर्शन का विशेषज्ञ योगी जो चाहे सो कह सकता है उसे कौन रोक सकता है? शीश तली पर धरकर जीवनभर पाखण्ड-खण्डन करना, कुरीतियों का निवारण व सत्य का मण्डन ऐसे योगी क्या कर सकते हैं? राजाओं को फटकार लगाने वाले अटल ईश्वर विश्वासी ऋषि पर वाणी से हिंसा करने का दोष लगाना यह एक cheap opinion सस्ती राय है।

वेद में 'अकर्मा दस्यु' को एक ईसाई लेखक ने एक बार गाली घोषित कर दिया। वेद में मनुष्य को उल्लू की, भेड़िये की, कुत्ते की चाल छोड़ने का उपदेश-आदेश भी फिर तो वाणी से हिंसा है। भक्ति साहित्य में कामान्ध व कामी कुत्ता आदि शब्द भी फिर गाली व वाणी की हिंसा हैं। एक महर्षि दयानन्द ही हैं जिन्होंने तब mutiny को ग़दर, द्रोह नहीं कहा और न लिखा। इस शूरता और आत्मबल का तो ये योगी मूल्याङ्कन न कर पाये। देशभर में विरोध होता रहा, पत्थर ईंटें बरसाई गई, वह निर्भीक ऋषि कहीं दबा? कहीं डरा? कहीं झुका? इससे बड़ा प्राणों का निर्मोही, आत्मबल वाला कहाँ मिलेगा? मुहम्मद साहिब को पलायन (हिजरत) करना पड़ा। ईसा ने मरते समय क्या कहा? कुछ तुलना करके योगी जी मुँह खोलते तो अच्छा होता।

मैक्समूलर की गोलमोल बातें- मैक्समूलर महोदय ने अपनी अन्तिम पुस्तक My Indian Friends में भी ऋषि की प्रशंसा तो की है, परन्तु अपने गोलमोल शब्दों में उसने इसमें अपनी कूटनीति का भी अच्छा परिचय दिया है।

Though I was told soon after his death that he had been poisoned by the Brahmans, who were afraid of his sweeping social reforms, I was told by an Indian friend of mine that it is supposed that his death was caused by the dancing girl, who, at the instigation of Dayananda had been placed under strict surveillence by the.......

भाव यह है कि उसे अपने स्रोतों से पता चला कि ब्राह्मणों ने स्वामी दयानन्द को विष दिया या दिलवाया। वे उसके क्रान्तिकारी सुधारों से भयभीत थे। उसने यह भी लिखा कि नृत्याङ्गना या वेश्या उसकी मौत का कारण बनी, जिसे दयानन्द के उकसाने पर कड़ी निगरानी में रखा गया। Instigation शब्द मैक्समूलर महोदय के मनोभावों को बताता है।

कुछ इधर की कुछ उधर की- कोई दिन नहीं जाता जब दूरदर्शन तथा समाचार-पत्रों में छोटी-छोटी बच्चियों व युवतियों से बलात्कार के दो-चार दु:खद दर्दनाक समाचार

सुनने-पढ़ने को न मिलें। जिस देश में कुछ वर्षों से योग और गुरुओं के समाचार सुनकर भावुक जनता इतराती थी वह देश पतन की कितनी गहरी खाई में गिर चुका है। जहाँ लोग प्रत्येक नई विपदा के आने पर **'यदा यदा हि धर्मस्य...'** श्लोक की दुहाई देकर भगवान् के किसी अवतार के आगमन की ओर टकटकी लगाकर देखने के अभ्यस्त हो चुके थे, उसकी दुर्दशा का अब चित्रण कौन करे? निराश प्रजा ने, भक्तजनों ने अब किसी अवतार के आने की आस ही छोड़ दी है और न ही कोई बाबाजी व विश्व हिन्दू परिषद् अब किसी अवतार के आने का आश्वासन दे रहे हैं।

पतन की पराकाष्ठा यहाँ तक है कि चेलियों से, शिष्याओं से यौन-शोषण में नये-नये राम रहीम फँसते जा रहे हैं। शिष्याओं को योगदर्शन पढ़ाते-सिखाते विवाह रचाकर नये-नये इतिहास बना रहे हैं। दु:खी जनता में से कुछ यह कहते हुये सुने गये कि चलो बापू आसाराम से ये विवाह रचाने वाले बाबा जी अच्छे हैं। ''अच्छे होंगे, परन्तु करतूत तो वैसी ही है।'' यह भी कुछ लोगों का कहना है।

इतना पतन क्यों? व कैसे?- इतिहास कहता है कि अपार धन, सम्पदा, वैभव व सुख-सुविधाओं के कारण बौद्ध मठों व विहारों में रहने वालों के पतन के कारण बुद्धमत का ह्रास हुआ। न साधु साधु रहे और न साध्वियाँ ही चरित्रवान् रहीं। युवा स्त्री-पुरुषों के सहवास से योग से सम्भोग की ओर जाना स्वाभाविक है। 'सम्भोग से समाधि की ओर' तो फिर एक मिथ्या कल्पना ही सिद्ध होती थी।

यह वही देश है जहाँ बाल ब्रह्मचारी दयानन्द जी महाराज ने राजमाता बड़ौदा के सचिव द्वारा प्राप्त राजमाता को दर्शन व उपदेश देने की विनती ठुकरा दी थी। नहीं! मैं स्त्रियों को उपदेश देने, सिखाने-पढ़ाने वाला बाबा नहीं। यह उत्तर दिया। माई भगवती का शंका-समाधान कैसे किया? माता भगवती द्वारा दिये गये साक्षात्कार को पढ़कर मुख से अनायास यह निकल आता है- **''महिमा अखण्ड ब्रह्मचर्य की महान् है।''**

'सब भार उसी के हाथों में'- धर्मप्रेमी प्राय: यह पूछते रहते हैं कि स्वास्थ्य कैसा है? अब आगे क्या लिख रहे हो? अब सबको मेरा उत्तर यह होता है कि श्रीमती जिज्ञासु का स्वास्थ्य तो पटरी से कुछ उतर चुका है फिर भी अपनी दिनचर्या पर वह अटल हैं। आयु का तो इस विनीत पर स्पष्ट प्रभाव है, परन्तु दिनभर प्रभु की वेदवाणी व ऋषि मिशन की सेवा में लगा रहता हूँ। यह सक्रियता अन्त तक बनी रहे, यही चाहना है। परन्तु-

जो मैं चाहूँ सो हो जावे, कभी ऐसा नहीं होगा।

सो अब सब कुछ उसी की इच्छा पर छोड़ दिया है। **ईश्वरेच्छा पर रहने व जीने का एक अलौकिक आनन्द है।** जो ऋषि-भक्त समर्पित प्रेमी युवक कार्य देते रहेंगे, वे करता जाऊँगा। वही छपवाते हैं। क्या लिख रहा हूँ, क्या छप रहा है? यह देवनगर वालों से, लक्ष्मण जी, धर्मेन्द्र जी आदि से पूछते रहिये। **'कुल्लियाते आर्य मुसाफिर'** से पहले **अमर धर्मवीर** व **रक्तरंजित है कहानी, स्वामी श्रद्धानन्द जीवन-यात्रा** तो मिलेंगे ही। ऋषि जी के एक दुर्लभ ग्रन्थ पर अब गोविन्दराम हासानन्द के लिये भक्तिभाव से श्रम किया जावेगा। देवनगर वाले लौहपुरुष का एकदम नया संस्करण प्रकाशित करके आर्यों को अनुप्राणित करेंगे। जिनमें कोई महत्त्वाकांक्षा नहीं, ऐसे समर्पित परमार्थी और पुरुषार्थी युवकों की एक टोली धर्मरक्षा में सक्रिय देखने की इच्छा है। बस।

ऋषि दयानन्द ने कहा था

विद्वान् एकमत हो प्रीति से वर्तें

यद्यपि आजकल बहुत से विद्वान् प्रत्येक मतों में हैं, वे पक्षपात छोड़, सर्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् जो-जो बातें सबके अनुकूल सब में सत्य हैं, उनका ग्रहण और जो एक-दूसरे के विरुद्ध बातें हैं, उनका त्याग कर परस्पर प्रीति से वर्तें-वर्तावें तो जगत् का पूर्ण हित होवे। क्योंकि विद्वानों के विरोध से अविद्वानों (साधारण जनों) में विरोध बढ़कर अनेकविध दु:ख की वृद्धि और सुख की हानि होती है।

(स.प्र.भू.)

आर्यों के लिये शुभ सूचना

'कुल्लियाते आर्यमुसाफ़िर' छपने के लिये तैयार

कुछ समय पूर्व 'परोपकारी' में सूचना प्रकाशित हुई थी कि पं. लेखराम आर्य मुसाफ़िर के साहित्य 'कुल्लियाते आर्य मुसाफ़िर' को परोपकारिणी सभा प्रकाशित करने जा रही है। इस सूचना को पढ़कर आर्यजगत् में उत्साह का संचार होना स्वाभाविक ही था, जिसके परिणामस्वरूप इस ग्रन्थ को छापने के लिये कई साहित्यप्रेमियों ने सभा को सहयोग भी किया, परन्तु पंडित लेखराम जैसे नाम पर यह सहयोग पर्याप्त मालूम नहीं हुआ। पंडित लेखराम वह नाम है जिसके वैदिक-ज्ञान के सामने विरोधी काँपते थे। ऐसे सिद्धान्तमर्मज्ञ ने अपनी संचित ज्ञान-राशि को लेखबद्ध किया और इस लेखबद्ध ज्ञानराशि को यति शिरोमणि स्वामी श्रद्धानन्द जी ने एकत्रित किया और एक ग्रन्थ निर्मित हुआ, जिसका नाम था 'कुल्लियाते आर्यमुसाफ़िर'। यह ग्रन्थ दो भागों में प्रकाशित हुआ। वर्त्तमान में यह ग्रन्थ दुर्लभ हो गया था। परोपकारिणी सभा ने इसे पुन: प्रकाशित करने का निर्णय लेकर पं. लेखराम को पुनर्जीवित कर दिया है। हमने लेखराम का गुणगान ही सुना है, उनके जीवन को ही पढ़ा है, पर वह इस उच्च पदवी को कैसे पा गये- इसकी सच्ची खबर तो उनके लिखे पन्ने ही बता सकते हैं। इन पन्नों को किताब रूप में छापने के लिये जैसा उत्साह, जैसी उमंग दिखनी चाहिये थी, उसमें अभी न्यूनता ही नज़र आती है।

अब यह ग्रन्थ छपने के लिये प्रेस में भेजा जा रहा है। अच्छे कार्यों का सदैव प्रोत्साहन होना चाहिये, इस दृष्टि से इस पुस्तक में **११०००/-रु.** का सहयोग करने वालों के नाम प्रकाशित किये जायेंगे। **एक लाख रु.** से अधिक का सहयोग करने वालों का चित्र सहित आभार व्यक्त किया जायेगा।

आइये, महर्षि दयानन्द के मिशन के लिये अपना जीवन देने वाले आर्यपथिक पं. लेखराम को केवल शब्दों से याद न करके उन्हें पुनर्जीवित करने में भरपूर उत्साह से सहयोग करें।

ओम्मुनि
मन्त्री, परोपकारिणी सभा

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्ष २०१२ से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं। चिकित्सालय का समय प्रात: ९ से ११ बजे तक है। रविवार का अवकाश होता है।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com

ऋषि सान्दीपनि के शिक्षा-केन्द्र में

आचार्य उदयवीर शास्त्री

पाठकगण! 'ऐतिहासिक कलम' स्तम्भ के अन्तर्गत पं. उदयवीर शास्त्री जी के कई लेखों को आप पढ़ चुके हैं। किसी साधारण सी बात पर भी जब एक विद्वान्, दार्शनिक लेखनी उठाता है तो लगता है कि जीवन का सार बस इसी बात में तो था। कृष्ण और सुदामा मिलन की घटना किसने पढ़ी-सुनी नहीं होगी, पर उसकी गहराई तक तो कोई कुशल तैराक ही पहुँच सकता था। उदयवीर शास्त्री वही तैराक हैं, जो बाहर से शान्त दिखाई देने वाले समुद्र में से रत्नों को खोज लाते हैं। आज की शिक्षा व्यवस्था पर बहुत ही सभ्य-साहित्यिक कटाक्ष इस लेख में किया गया है। रत्न तो खोताखोर ने दे दिये, पर अब उसे आभूषण बनाना भी किसी पारखी का ही काम है, सामान्य व्यक्ति का नहीं। आशा है पारखी पाठक इसे पढ़कर शिक्षा व्यवस्था में क्रान्ति लाने के लिये उद्यत होंगे। यह लेख कई वर्ष पहले का लिखा हुआ है, अतः कुछ घटनाओं को उसी परिप्रेक्ष्य में देखें। धन्यवाद -सम्पादक

यह एक दैवाधीन घटना कही जा सकती है कि राजपरिवार के एक बालक का जन्म कारागार में होता है। कारागार भी किन्हीं सतत शत्रुओं की योजना का फल नहीं, यह स्थिति अपने एक सगे सम्बन्धी ने पैदा की। साधारण परिवार में भी पुत्र-जन्म पर अनुपम उल्लास का वातावरण बन जाता है, फिर किसी सम्पन्न, विशिष्ट परिवार एवं राजपरिवार में तो ऐसे अवसरों पर न केवल परिवार व सगे सम्बन्धियों में, प्रत्युत-समस्त समाज एवं राष्ट्र में हर्ष का वातावरण छा जाता है। पर इसके विपरीत आज राजपरिवार के उस शिशु का जन्म होने पर हर्ष उल्लास तो एक ओर रहा, माता-पिता की चिन्ता तीव्र रूप में उभर आई है। प्रसव के अनन्तर माता अचेत है, पिता चिन्ता से व्याकुल है, शिशु की कैसे रक्षा की जाय। कल्पना कीजिये उन चिन्ता निमग्न माता-पिता की व्याकुलता की, जिन्हें यह मालूम हो कि उनका यह दिल का कुसुमसम कोमल टुकड़ा कुछ काल के अनन्तर ही उस आततायी के द्वारा नष्ट कर दिया जायगा, जिसने हमें इस कारागार में बन्द किया है।

कहते हैं कि रक्षा करने वाले का हाथ लम्बा होता है।

"जाको राखै साइयां मारि सकै न कोय"

'अरक्षितं तिष्ठति दैवरक्षितम्'। माता-पिता मोहवश अभी तक जिसे अरक्षित समझते थे, अचिन्त्य शक्ति भगवन् की कृपा ने उसका सुरक्षा-मार्ग सुझा दिया है। शिशु मथुरा के कारागार से निकाला जाकर यमुना के दूसरी ओर गोकुल नामक बस्ती में रातों-रात सुरक्षित पहुँचा दिया जाता है, पर इतनी बड़ी घटना का उस कारागार के मालिक आततायी को कानों कान कुछ भी पता नहीं लगता। प्रसव सम्बन्धी सब कार्य यथावत् सम्पन्न किये जाते हैं। गहराई से विचार कीजिये, उस रहस्यमय प्रबन्ध के विषय में, जिसके द्वारा उन कठोर परिस्थितियों में नवजात शिशु को बिना बाधा के सुरक्षित किया जा सका। अपने जीवनकाल की एक घटना पाठकों को स्मरण होगी, जब शक्तिशाली ब्रिटिश सरकार की आँखों के नीचे सुभाष बाबू सरकार के सब विरोधी प्रयत्नों के रहते सुरक्षित रूप में ब्रिटिश राज्य से बाहर जा सके।

एक आततायी शासक के अत्याचारपूर्वक कार्यों से असन्तुष्ट एवं क्षुब्ध होकर प्रजाजन शासक के अनचाहे कार्यों को किस प्रकार निर्बाध रूप में कर डालते हैं, इस सच्चाई को परखने के लिये यह एक घटना एक पुष्ट प्रमाण है। कारागार के प्रबन्धक कर्मचारी तो शासक के वेतनभोगी रहे होंगे। उनके पूर्ण सहयोग के बिना शिशु को कारागार से बाहर ले जाकर सुरक्षित करना संभव था? इससे अत्याचारी शासक के प्रति उसके कर्मचारियों की भावना का पता लगता है।

शिशु गोकुल में पालित-पोषित हो रहा है। यह तात्कालिक प्रचार का ही परिणाम रहा होगा जो उस समय समस्त समीपवर्ती जनता यही जानती व मानती रही है कि शिशु कृष्ण यशोदा के पेट से जन्मा गोप नन्द का द्वितीय पुत्र है। सच्चा इतिहास तो बाद में ही लिखा गया। गोप नन्द गोकुल तथा आस-पास के प्रदेश में एक प्रतिष्ठित सामान्य

भूमिपति थे, उनके गोधन की संख्या सैंकड़ों में रही होगी। कदाचित इससे भी अधिक और भी अनेक गोप परिवार वहाँ बसते थे, उनका विशाल गोधन था। गोधन के झुण्ड के झुण्ड यमुना के विस्तृत खादर और समीप के जङ्गलों में प्रतिदिन चरने जाते, जो गोचर भूमि के रूप में सुरक्षित थे। नन्द के दोनों बाल भी अन्य बालकों के साथ गायें चराने जङ्गल में चले जाते।

अब उनका शिशु वयस पूरा हो चुका था, ब्रज में रहते हुए उनकी आयु ६-७ वर्ष की हो गई। जब गायों के साथ जाते, तो छोटे बछड़े- बछियों की देखभाल उनके सुपुर्द रहती। उनको घेरने, पकड़ने और उनके साथ खेलकूद में दोनों बालक बड़ा आनन्द लेते। पत्तों की पीपनी बना कर बड़े स्वर के साथ बजाते, बछड़े-बछियों के अलग-अलग नाम रक्खे रहते या कभी स्वयं उनके विभिन्न नाम रख लेते और उन्हें पुकार-पुकार कर बुलाते रहते। घर से जाते समय तुम्बी में पानी और कपड़े की खूँट में खाना बाँध कर ले जाते, जो उनके कन्धे पर दोनों ओर को लटका रहता। जंगल में कहीं बालक मिलकर खेलते रहते, तो कभी अवसर मिलने पर पत्तों पर ही सो जाते। इस तरह बाल्यकाल के कुछ वर्ष और बीत गये। अब कृष्ण अकेला ही गोप बालकों के साथ जंगल में गाय चराने चला जाता, बड़े भाई बलराम का अब साथ जाना आवश्यक न रहा। कृष्ण अपना कार्य संभालने में चतुर दिखता था और अन्य गोप बालकों के साथ उसका मेल-जोल खूब बढ़ गया था, वह सबसे स्नेह करता और सब उसको खूब प्यार करते थे।

एक दिन जंगल में उन्हें एक बहुत विस्तृत बड़ का पेड़ दीखा। सबकी सलाह से वहीं उन्होंने प्रतिदिन दुपहरी में विश्राम करने का स्थान बना लिया। गायों बछड़ों को छोड़ सब बालक कुछ समय के लिये वहाँ इकट्ठे होते और विभिन्न प्रकार के खेल आदि से अपना मनोरञ्जन करते। कोई मिलकर गाते और कुछ बालक पत्तों के ही विविध बाजे बनाकर बजाते, कृष्ण भी कभी गाने वालों और कभी बजाने वालों में सम्मिलित हो जाता। कई बार जंगल में भयावह प्राणियों से सामना होने पर कृष्ण ने बड़ी बहादुरी और साहस के साथ उनका मुकाबला किया और उन्हें परास्त कर भगा दिया या मार डाला। उसके ऐसे साहसपूर्ण कार्यों से सभी गोप बालक उसका आदर करते और उसके आदेशों का पालन करते, अब वह उनका एक तरह नेता बन गया था। उसके साहसिक कार्यों की गोकुल तथा समीप के ब्रज प्रदेश में चर्चा होती और बहुत बार खूब बढ़ा-चढ़ा कर होती, जितने मुंह उतनी बात।

एक दिन यशोदा ने नन्द से कहा, अब कृष्ण काफी समझदार हो गया है। इसका अब उपनयन हो जाना चाहिये। फिर आगे उच्च शिक्षा के लिये किसी उपयुक्त शिक्षा-केन्द्र में भेज दिया जाय, तो ठीक होगा। नन्द ने पत्नी के सुझाव को पूर्ण रूप से स्वीकार कर दोनों बालकों का अपने कुल पुरोहित ऋषि गर्ग के द्वारा उपनयन करा उन्हें ऋषि सान्दीपनि के गुरुकुल में भेज दिया।

अपने समय में ऋषि सान्दीपनि एक प्रतिष्ठित एवं समान्नीय शिक्षाविद् थे। इनका शिक्षा-केन्द्र अवन्ती देशों में उज्जैन नगर के कहीं आस-पास था। गोकुल से दो बालकों को शिक्षा के लिये उज्जैन भेजा जाना यह प्रकट करता है कि उस समय देश में ऋषि सान्दीपनि के शिक्षा-केन्द्र की प्रतिष्ठा बहुत बढ़ी-चढ़ी थी। देश में चारों ओर से अनेक छात्र वहाँ विद्याध्ययन के लिये आते थे। कहा जाता है कि उस शिक्षा-केन्द्र में सहस्रों विद्यार्थी विविध विद्याओं का पूर्ण रीति से अध्ययन करते थे। किन-किन विद्याओं के अध्ययन का वहाँ प्रबन्ध था, इसकी एक सूची महाभारत आदि ग्रन्थों में उपलब्ध होती है। उससे निम्न निर्दिष्ट विद्याओं के अध्ययन-प्रबन्ध का पता लगता है-

षडङ्ग वेद- **छहों अंगों सहित वेदों का अध्यापन। वेदों के छः अंग हैं- शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष।**

चित्रकला- **जिसमें ड्रॉइंग व पेन्टिग भी सम्मिलित हैं।**

गणित- **अङ्कगणित, बीजगणित, रेखागणित सब प्रकार का गणित इसमें आ जाता है।**

गान्धर्व वेद- **संगीत-विद्या, गाना बजाना, नाचना आदि।**

आयुर्वेद- **चिकित्साशास्त्र।**

हस्ति शिक्षा- **गजारोहण तथा गज के गुण-दोषों की पहचान।**

अश्व शिक्षा- अश्वारोहण, अश्व की विविध गति तथा उसके गुण-दोषों की परख।

धनुर्वेद- सब रहस्यों तथा दस अङ्गों के सहित सब प्रकार की शस्त्रास्त्र विद्या की शिक्षा। धनुर्वेद के दस अंगों का वर्णन निम्नलिखित रूप में उपलब्ध होता है।

व्रत- धनुर्वेद की शिक्षा के लिये निष्ठा एवं दृढ़ता के साथ संकल्प।

प्राप्ति- परिश्रमपूर्वक शस्त्रास्त्र विद्या को प्राप्त करना।

धृति- प्राप्त को प्रयन्तपूर्वक धारण करना।

पुष्टि- शिक्षा काल में जो सीखा है, उसको अपने निरन्तर परिश्रम से तथा अन्य विविध ऊहापोह द्वारा पुष्ट करना।

स्मृति- अभ्यासपूर्वक समस्त सीखे हुए को याद रखना।

क्षेय- स्मरणपूर्वक उसका यथावसर प्रयोग करना।

शत्रु-भेदन- प्रयुक्त शस्त्रास्त्र द्वारा शत्रु का विनाश।

चिकित्सा- स्वयं पर शत्रु द्वारा प्रयोग होने पर उसका प्रतिकार करना तथा उसके प्रतिरोध के उपायों को जानना।

उद्दीपन- शस्त्रास्त्र विषयक क्षति को पूरा करना।

कृष्टि- युद्धोपकरणों का यथावश्यक पुनः संस्कार। टूट-फूट की आवश्यकतानुसार मरम्मत।

विधिशास्त्र- सब प्रकार के कानून।

उपनिषद्- अध्यात्म-विद्या।

उपर्युक्त सब विद्याओं के अध्यापन का प्रबन्ध ऋषि सान्दीपनि के शिक्षा-केन्द्र में था, इससे उसकी विशालता और उसके विस्तार का पता लगता है।

इस शिक्षा-केन्द्र के द्वार गरीब-अमीर सभी प्रकार के योग्य छात्रों के लिये समभाव से खुले रहते थे। जहाँ कृष्ण जैसे राजपरिवार के छात्र वहाँ प्रवेश पाते थे, वैसे ही सुदामा जैसे अति निर्धन छात्रों का प्रवेश भी वहाँ बिना किसी बाधा के अति सुलभ था। शिक्षा-केन्द्र में धनी-निर्धन का कोई प्रश्न नहीं था। शिक्षाकाल में समस्त छात्रों का रहन-सहन, आहार-व्यवहार तथा अन्य सब कार्यक्रम समान रूप से चलता था। उस काल में आजकल की तरह शिक्षा के लिये साधारण स्कूल और पब्लिक स्कूल जैसा कोई भेद न था। आजकल धनी बालक व राजकुमारों के लिये विशेष रीति पर पब्लिक स्कूल तथा चीफ्स कॉलिज जैसे शिक्षा-केन्द्र पृथक् चलाये जाते हैं। इनमें सर्वसाधारण के बालक प्रतिभाशाली होने पर भी नहीं फटक सकते। बाल्यकाल से डाला गया वह भेद समस्त जीवन अपना प्रभाव रखता है। इस रूप में धनियों का एक पृथक् बना समाज सर्वसाधारण जन को तुच्छ व घृणित समझने लगता है और कभी उनके मानव जनोचित अधिकारों से भी उनको वञ्चित रखने में किसी प्रकार की अड़चन का अनुभव नहीं करता। ये ऐसे आधार हैं, जिनके द्वारा सामाजिक संघर्ष सदा नये-नये रूप में उभरते रहते हैं।

उस काल के सान्दीपनि ऋषि के शिक्षा-केन्द्र की एक घटना सहस्रों वर्ष बीत जाने पर आज भी भारत के जन-जन की जुबान पर है। शिक्षा-केन्द्र से स्नातक होने पर सुदामा जब निर्धनता से लोहा लेने में असफल रहा, तो पत्नी के सुझाव पर इस दिशा में वाञ्छनीय सहयोग के लिये कृष्ण के पास जाने को तैयार हो गया, पर बड़ी झिझक के साथ, वह नहीं चाहता था कि इस दशा में भी मुझे किसी से कुछ सवाल करना पड़े। उसका आत्मगौरव उसे इधर से रोकता था, पर परिवार की अवस्था ने उसे इस ओर कदम बढ़ाने को मजबूर किया था। कृष्ण सुदामा का क्या लगता था? कुछ भी नहीं, न जात-बिरादरी न आस-पड़ौस। वह केवल कुछ काल तक एक शिक्षा-केन्द्र में सहाध्यायी रहा था। यही तन्तु उसकी आशा का सहारा था और इस पर उसे पूरा भरोसा था। इस भावना को बनाने में तात्कालिक शिक्षा-पद्धति को ही श्रेय दिया जाना चाहिये। वैसी शिक्षा-पद्धति के अभाव में यह विश्वास होता है कि सुदामा जिस रूप में कृष्ण के द्वार पर पहुँचा, निश्चित ही उसके द्वारपालों ने उसे धक्का देकर निकाल दिया होता और कृष्ण को उसका पता तक न लगता।

अभी पिछले दिनों दिल्ली के एक दैनिक-पत्र में राजस्थान के एक बुद्धिजीवी नेता का अनुभव प्रकाशित

हुआ था। उनके एक घनिष्ट मित्र राजस्थान सरकार में कुछ समय के लिये मन्त्री निर्वाचित हो गये। उनके मित्र कभी जयपुर उनसे मिलने गये, तो न केवल इतना कि उन्हें घण्टों प्रतीक्षा करनी पड़ी, प्रत्युत मिलने पर उस वार्तालाप में मैत्री-स्नेह का उन्हें गन्ध भी अनुभव न हुआ। यद्यपि वे मित्र को बधाई देने की भावना से गये थे, किसी परमिट या व्यापार आदि सम्बन्धी स्वार्थपूर्ण भावना से नहीं। उस फीकी मुलाकता के बाद मित्र अपने स्थान कलकत्ता चले गये। मन्त्री महोदय उस दौरान कलकत्ता पधारे और मित्र को सूचना भेजी, मैं आया हूँ, मिल जायें। पर मित्र उनसे मिलने न गये। बाद में मन्त्री महोदय ने कुछ उभय परिचित व्यक्तियों से शिकायत की, देखो, हमारे बुलाने पर भी वे मिलने न आये। दैववश या अन्य किन्हीं कारणोंवश अगले निर्वाचन में वे मन्त्री महोदय असफल रहे, विधानसभा के सदस्य भी न चुने जा सके, तब मन्त्री बनने का प्रश्न ही नहीं था। अब वे मित्र कभी सामने आते हैं, तो भूतपूर्व मन्त्री महोदय के चेहरे पर विविध रंगों की दौड़ होने लगती है।

ऐसे व्यवहार में आधुनिक शिक्षा-पद्धति एक प्रधान कारण है। संभवत: शिक्षा के आधुनिक क्रम में इस वास्तविकता को भुला दिया गया है कि शिक्षा का उद्देश्य सन्तुलित जीवन के वास्तविक उपायों की खोज करना है। मूल को न सींचकर हम पत्तों पर पानी छिड़ककर वृक्ष को हरा-भरा देखना चाहते हैं, जो संभव नहीं। प्राचीन शिक्षा-पद्धति में यह विशेषता रही है। इस काल में प्रत्येक धनी या निर्धन के बालक को नियत अवधि के लिये शिक्षा-केन्द्र में आवश्यक रूप से जाना पड़ता है, जहाँ सबके लिये समान रूप से शिक्षा एवं आहार-व्यवहार का प्रबन्ध रहता था। केन्द्र का नियत कार्यक्रम सबको पूरा करना होता था। ऐसे समान वातावरण से शिक्षित होने के कारण जब सुदामा कृष्ण के पास पहुँचता है, तो कृष्ण का अतुल ऐश्वर्य उनके मिलन में किसी तरह की बाधा नहीं पहुँचाता। अनुपम हर्षोल्लास के साथ मिलते हुए दोनों अपने शिक्षाकाल की अनेक घटनाओं का स्मरण करते हैं। कृष्ण ने देखा सुदामा कुछ पोटली सी बगल में दबाये हैं। उन्हें बाल्यकाल की एक घटना याद आई और सुनाने लगे, सखे सुदामा! याद है, जब हम अवन्ति देशों में गुरु के आश्रम में अध्ययन करते थे, एक दिन माता (गुरु पत्नी) जी ने हमें जंगल से कुश व समिधा लाने के लिये आदेश दिया था और वहाँ भूख लगने पर कुछ चने चबा लेने के लिए दिये थे। तुमने स्वयं ही वे छिपे-छिपे चबा लिये थे, मालूम होता है, आज भी हमारी भाभी जी ने जो सामान हमारे लिये भेजा है, बगल में चुपचाप छिपाये बैठे हो। द्वारिका के असीम ऐश्वर्य को देख अभिभूत हुए सुदामा चावल की मुट्ठी भर पोटली को निकालते सकुचा रहे थे, पर साथी के उस उन्मुक्त वार्तालाप से संकोच की दीवार ढह गई और चावल की पोटली कृष्ण के सामने कर दी। कृष्ण ने जिस आदर और स्नेह से उसे स्वीकार किया, उसका उदाहरण आज कदाचित् ही मिले।

शिक्षाकाल के सुबद्ध संस्कार जीवन में बराबर मार्गदर्शन करते हैं। ऋषि सान्दीपनि के शिक्षा-केन्द्र में शिक्षित धनी और निर्धन बालकों का अपने कार्यकाल में आकर प्रकट किया व्यवहार यह स्पष्ट करता है कि सन्तुलित जीवन के लिये शिक्षाक्रम में अनिवार्य रूप से क्या अपेक्षित होना चाहिये। समाजवादी समाज-व्यवस्था का बीज हम इसमें पा सकते हैं।

ऋषि दयानन्द ने कहा था

सत्य और असत्य क्या है?

जो-जो ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव और वेदों से अनुकूल हो वह-वह सत्य और उससे विरुद्ध असत्य है। जो-जो सृष्टिक्रम से अनुकूल वह-वह सत्य और जो-जो सृष्टिक्रम से विरुद्ध है वह-वह सब असत्य है, जैसे कोई कहे कि बिना माता-पिता के योग से लड़का उत्पन्न हुआ ऐसा कथन सृष्टिक्रम से विरुद्ध होने से सर्वथा असत्य है।

(स. प्र. स. ३)

'सत्यार्थ प्रकाश' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति

महर्षि दयानन्द सरस्वती का अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' आर्यों का ब्रह्मास्त्र है। ऐसा ब्रह्मास्त्र, जिसने अविवेक, पाखण्ड, अन्धविश्वासों का दमन कर समाज में एक नई क्रान्ति 'वैचारिक क्रान्ति' को जन्म दिया। अन्धश्रद्धा, अविवेक और पाखण्ड मानव समाज में सहज ही पनपने वाली समस्या है, इसलिये प्रत्येक काल, प्रत्येक स्थान और प्रत्येक परिस्थिति में इन समस्याओं के उन्मूलन की आवश्यकता है-अत: 'सत्यार्थ प्रकाश' की आवश्यकता भी सदैव ही अनिवार्य रहेगी, परन्तु यह विचार जन-जन तक पहुँचे, तो ही लाभकारी होगा। इसी को ध्यान में रखते हुए परोपकारिणी सभा ने ५ वर्ष पूर्व 'विश्व पुस्तक मेला' दिल्ली में प्रतिवर्ष 'सत्यार्थप्रकाश' के साथ 'महर्षि का जीवन-चरित्र' एवं 'आर्याभिविनय' पुस्तक का नि:शुल्क वितरण करने की योजना बनाई, जो निरन्तर चल रही है। इस कार्य के परिणाम भी बहुत सुखद रूप में सामने आये हैं। पुस्तक में कई व्यक्ति आकर कहते हैं कि हमारे पास यह पुस्तक है, हम पिछले वर्ष ले गये थे।

प्रत्येक आर्यमात्र की यह इच्छा होगी कि वह भी इस ग्रन्थ को वितरित कर पुण्य का भागी बने। इसके लिये सभा प्रत्येक आर्य को इस महायज्ञ में सम्मिलित करना चाहती है। प्रत्येक व्यक्ति यज्ञ में अपनी आहुति दे तो यज्ञ और अधिक भव्य एवं विस्तृत हो जाता है। 'सत्यार्थप्रकाश' के नि:शुल्क वितरण रूपी यज्ञ में अपनी आहुति देने के लिये आप अपने सामर्थ्यानुसार सहयोग दे सकते हैं। परोपकारिणी सभा की ओर से प्रकाशित सत्यार्थप्रकाश बड़े अक्षरों में, बढ़िया कागज पर, सजिल्द छापी जाती है, जिससे नये व्यक्ति के लिये भी पुस्तक संग्रहणीय बन जाती है। इस पुस्तक की छपाई में एक प्रति का खर्च लगभग १०० रु. आता है। **यदि कोई व्यक्ति अपनी सात्त्विक भावना से केवल २० पुस्तकें (इससे अधिक कितनी भी) ही वितरित करवाना चाहता है, तो सभा उतनी प्रतियों पर दानी व्यक्ति का नाम छपवाकर वितरित करेगी। इसी प्रकार ३०, ५०, १०० आदि।**

१०० रु. प्रति के अनुसार आप दान देकर अपनी ओर से, अपने नाम से पुस्तक वितरित करा सकते हैं। आहुतियाँ जितनी अधिक होंगी, यज्ञ का फल भी उतना ही अधिक होगा।

अपने दान के साथ 'सत्यार्थप्रकाश वितरण' अवश्य लिख देवें, और साथ ही अपना नाम एवं पता भी। यह दान आप परोपकारिणी सभा के खाते में ऑनलाइन, चैक द्वारा या फिर परोपकारिणी सभा के पते पर मनिऑर्डर भी कर सकते हैं। यह यज्ञ आपका है, प्रत्येक आर्य का है। अत: प्रत्येक आर्य इसमें अपनी आहुति अवश्य दे।

न्यूनतम	२० प्रतियाँ	२१००/- रु.
	३० प्रतियाँ	३१००/- रु.
	५० प्रतियाँ	५१००/- रु.
	१०० प्रतियाँ	११०००/- रु.

इस प्रकार जितनी अधिक प्रतियाँ बाँटना चाहें, उतनी और दूरभाष संख्या के साथ भेज देवें। दान अक्टूबर माह के अन्त तक भिजवा देवें, ताकि प्रतियों की संख्या निर्धारित करके उन पर दानदाताओं का नाम अंकित किया जा सके। धन्यवाद।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-0911040000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

IFSC - IBKL0000091

२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।

IFSC - SBIN0007959

राष्ट्र की प्रगति में राष्ट्रभाषा का महत्त्व

डॉ. प्रभु चौधरी

राष्ट्र में भाषात्मक एकता स्थापित करने तथा उसके उत्थान व विकास में भाषा का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। इसी दृष्टिकोण से भारतीय संविधान में भी हिन्दी को ही राष्ट्रभाषा घोषित किया गया है। हिन्दी हमारे राष्ट्र की आत्मा है, प्राण है। चेकोस्लोवाकिया के प्रसिद्ध हिन्दी विद्वान् डॉ. ओदोलन स्मेकल के विचारों को यहाँ उद्धृत करना असंगत न होगा। "**किसी देश की आत्मा को समझने के लिए उसकी भाषा को समझना बहुत आवश्यक है। हिन्दी वर्तमान भारत की राष्ट्रभाषा है। ऐसी समृद्धतम भाषा, जो भारत जैसे बहुभाषी राष्ट्र की सभी आवश्यकताओं को संतोषजनक ढंग से पूरा कर सकती है।**" भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह ने सरकारी कर्मचारियों को आह्वान करते हुए कहा था कि "**हिन्दी ही देश में एकमात्र ऐसी भाषा है, जिसका प्रयोग सम्पर्क भाषा के तौर पर किया जा सकता है, क्योंकि यह देश के अधिकतर लोगों द्वारा बोली तथा समझी जाती है।**"

आर्यसमाज के प्रख्यात नेता स्वामी आनन्द मिश्र सरस्वती ने अपने लेख 'हिन्दी और हिन्दुस्तानी' (सन्दर्भ 'हंस' स्वदेशांक सन् १९९२) में लिखा है कि वही सच्चा देशभक्त है जिसे अपनी संस्कृति, भाषा और साहित्य से प्रेम है। जिसको उनसे प्यार नहीं वह चाहे कुछ और हो सकता किन्तु सच्चा देशभक्त नहीं हो सकता। भारत में आज भी हिन्दी का प्रचलन विभिन्न राज्यों में अंग्रेजी भाषा की तुलना में नगण्य है। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी तो हिन्दी की दुर्दशा के प्रति इतने संवेदनशील थे कि जब मालवीय जी के आमन्त्रण-पत्र पर बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय आये थे तो अपने भाषण के आरम्भ में ही उन्होंने सखेद कहा था विश्वविद्यालय में प्रवेश करते ही मेरी दृष्टि सबसे पहले मुख्य द्वार पर लगे बोर्ड पर पड़ी, जिस पर अंग्रेजी में बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा था 'बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी' और नीचे हिन्दी में बहुत छोटे अक्षरों में लिखा था 'बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय'। मुझे लगा, जैसे किसी महारानी के पैरों में उसकी एक दासी दुबकी पड़ी है।

भाषा वह साधन है जिसके माध्यम से प्रत्येक प्राणी अपने विचारों व भावों को दूसरों पर अभिव्यक्त करता है। यह ऐसी दैवीय शक्ति है जो मनुष्य को मानवता प्रदान करती है, उसका सम्मान तथा यश बढ़ाती है। जिसे वाणी का वरदान प्राप्त है वह अक्षय कीर्ति का अधिकारी बन जाता है।

वस्तुत: एकता का आशय उस मूल भावना से है जो विभिन्न जातियों, वर्गों, धर्मों के अनुयायी भारतीयों को अपनी विभिन्न साम्प्रदायिक मान्यताओं के होते हुए भी अनुभूति कराती हैं कि हम सब भारतीय हैं। हिन्दी हमारे राष्ट्र की भाषा है। हिन्दी भाषा भारतीय अस्मिता की पहचान है। यह हमारे देश के जन-जन की भाषा है। बद्रीनाथ से रामेश्वरम् तक और द्वारिका से पुरी तक के समस्त भू-भाग में हिन्दी राष्ट्रीय अस्मिता के रूप में हमारी पहचान है। यह राष्ट्रीय एकता की कुंजी बनकर भारतवासियों के हृदयपटल को खोलकर उसमें एकता, अखण्डता, सहयोग, सहिष्णुता, उदारता, न्याय, सांस्कृतिक विरासत तथा हमारी श्रेष्ठतम मान्यताओं को आत्मसात करने वाली हमारी राष्ट्रभाषा है। हमारे देश के जनजीवन में रची-बसी यह भाषा हमारे गौरवमयी इतिहास की साक्षी है।

गरीब-अमीर, साधु-संत, कृषक, व्यापारी, शिक्षित-अशिक्षित, हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई समस्त समुदायों को जोड़ने वाली राष्ट्रभाषा हमारे गरिमामय अतीत के दर्शन कराने में सक्षम है। भारत की सभी अन्य भाषाएँ भी हिन्दी की बहन, बेटियों के रूप में हिन्दी को सम्मान देती है। हमारी सांस्कृतिक विरासत को अक्षुण्ण बनाते हुए एकता का सन्देश देने वाली हिन्दी भाषा उस गंगा के समान अथाह है जो समस्त भारतीयों को एकता के सूत्र से आबद्ध कर समूचे देश की भागीरथी बन गई है।

यह समूचे राष्ट्र के विविध धर्मावलम्बियों की पूजा-अर्चना, देवी-देवताओं की वन्दना तथा धार्मिक विधि-विधान की सीढ़ियाँ बनकर उस मंजिल तक पहुँचाती है जहाँ हम सब एक हैं।

जन-जन की वाणी है हिन्दी। हिन्दी देश की मान है। राष्ट्र-एकता की कुंजी है। हिन्दी हमारी अस्मिता है। हिन्दी ही हमारी पहचान है। भाषा मात्र अभिव्यक्ति का माध्यम ही नहीं है, वह अपने देश-काल की संस्कृति की आत्मा होती है। भारत भूमि को विश्वपटल पर आलोकित करने में हमारे साधु-सन्तों तथा ऋषि-मुनियों ने अपनी वाणी के माध्यम से ही जो अमरता प्रदान की है वह स्तुत्य है। हमारी सांस्कृतिक व पारम्परिक रीति-नीतियों को अक्षुण्ण बनाये रखने में तथा भावात्मक एकता को पोषण प्रदान करने में भाषा का ही विशेष योगदान रहता है। भाषा ही तो एकमात्र वह साधन है जो धर्म, संस्कृति, सभ्यता और विचार तरंगों का परस्पर सम्प्रेषण करते हुए जन-जन को एक सूत्र में पिरोकर एकता की मणिमाला के रूप में प्रस्तुत करती है। भाषा ही आम आदमी ही पहचान है जो उसके भावों का बोध कराती है। अपने स्वत्व को निर्धारित करती है। हिन्दी खड़ी बोली के उन्नायक श्री भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी भाषा के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए कहा है-

''निज भाषा उन्नित अहे, सब उन्नित को मूल।''

वर्तमान समय की अनिवार्यता हिन्दी भाषा ही है। इसके माध्यम से ही देश-विदेश का प्रत्येक व्यक्ति एक-दूसरे से जुड़ा हुआ है। भाषा पर ही जाग्रत भारत की नवीन सांस्कृतिक चेतना और पुनरुत्थान अवलम्बित है।

आज के युग में आतंकवाद, नक्सलवाद और उग्रवाद का जहर जनमानस में घुलता जा रहा है। ऐसी परिस्थिति में एकता का मूलमन्त्र ही राष्ट्र की अस्मिता को सुरक्षित रख सकता है और यह कार्य संचार माध्यम के द्वारा ही संभव है तथा भाषा ही एकमात्र रामबाण औषध के रूप में दृष्टिगत होती है।

''हिन्दी भाषा जिसकी लोकमान्यता विश्वस्तर पर है, यह भारत में भावात्मक एकता का स्रोत है। नाना विषमताओं के होते हुए भी हमारे देश में विलक्षण भावात्मक एकता दर्शनीय है जो विभिन्न जातियों, धर्मों, समुदायों और वर्गों की भिन्न-भिन्न मान्यताओं के होते हुए भी अनुभूति कराती है कि हम सब भारतीय हैं, जो हमारी एकता का सूचक है।'' डॉ. महाश्वेता चतुर्वेदी।

भाषा हमारी निजता को सुरक्षित रखते हुए एक-दूसरे से नजदीकियाँ बढ़ाती है और औद्योगिक क्षेत्र के विस्तारीकरण में भी भाषा ही का योगदान हैं जो एकता से सम्बद्ध प्रयासों का प्रतिफल है। आज के इस वैश्विक युग में जन-जन को जोड़ते हुए विकास की दिशा में अग्रसर होने के लिये भाषा का ही महत्त्वपूर्ण योगदान है जो भाइचारे की भावना को विकसित करते हुए विकास यात्रा को सुगम व सहज बनाने में विशेष भूमिका का निर्वहन करती है। भाषा द्वारा व्यक्ति अपने सूक्ष्म से सूक्ष्म विचारों की अभिव्यक्ति कर परस्पर स्नेह सम्बन्धों को प्रगाढ़ता दिलाने में सहयोग करता है।

आज भी हमारे देश के सभी शहरों तथा कस्बों में अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों की बाढ़ आ गई है। अधिकतर माता-पिता अपने छोटे-छोटे बच्चों को अंग्रेजी के शब्द प्रारम्भ से ही बड़े चाव से सिखाते हैं। अंग्रेजी भाषा हमारे देश की सामाजिकता, संस्कृति से काफी दूर है, उसके प्रति हमारे बढ़ते लगाव, सनक, शौक का आखिर क्या कारण है? यह तो ऐसा हुआ कि देश से अंग्रेज गये किन्तु अंग्रेजी नहीं गयी। कुछ लोग यह तर्क देते हैं कि अंग्रेजी भाषा में जितनी पुस्तकें हैं उतनी अन्य भाषाओं में नहीं हैं तथा यह भी कि आधुनिक शिक्षा भारतीय भाषाओं के मुकाबले अंग्रेजी भाषा में सरलता से होती है। यह तर्क भ्रामक तथा हिन्दी के प्रति अधूरे ज्ञान का द्योतक है। अंग्रेजी स्कूलों में जो शिक्षा दी जाती है वह बहुत ही महंगी होती है, फिर भी माता-पिता अपनी शान व अपने रहन-सहन के उच्च स्तर का प्रदर्शन करने हेतु अपने बच्चों को बड़ी-बड़ी राशि का दान देकर वहाँ ही शिक्षा दिलाते हैं।

उन्नति का कारण सत्योपदेश

जिससे मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो, सत्यासत्य को मनुष्य लोग जानकर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करें क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।

(स. प्र. ३)

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एकमात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ– प्रवचन, वेद-पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***– आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***– अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्णरूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***– गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***– वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***– इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोधकर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***– योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों में भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(१६ जून से १५ जुलाई २०१८ तक)

जून- १. श्रीमती मिथिलेश आर्य, ऋषि उद्यान, अजमेर २. श्री देवमुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर ३. श्री रमेश गजमल पाटिल, अमलनेर, जलगाँव ४. श्री मूलचन्द आर्य, जालौर ५. श्री वंश सैनी, गुरुग्राम ६. आर्यसमाज, दाल बाजार, लुधियाना ७. सचिव, आर्यसमाज, दाल बाजार, लुधियाना ८. श्री सुमित आर्य, सहारनपुर ९. श्री कुलदीप आर्य, जोधपुर १०. श्री अनिल कुमार सिंह, बस्ती ११. श्रीमती प्रकाशवती, सोनीपत १२. वैद्य स्वामी दयानन्द गिरि ऋषिकुल आयुर्वेदिक औषधालय, भिवानी १३. श्री त्रिलोक तहलान, रोहतक १४. श्री वृद्धिचन्द्र गुप्त, जयपुर १५. कुमारी तेजस्विनी, लातूर।

जुलाई- १. श्री बलेश्वर मुनि, नई दिल्ली २. श्री जेठू सिंह यादव व श्रीमती शकुन्तला यादव, बीकानेर ३. श्री मुमुक्षु मुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर ४. श्री मगन सिंह, गाजियाबाद ५. श्रीमती सरला शारदा चेरिटेबिल ट्रस्ट, अजमेर ६. श्री सरयूप्रसाद पटेल, मेरठ ७. श्री रमेश मुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर ८. डॉ. किशोर काबरा, ऋषि उद्यान, अजमेर ९. श्री सुरेन्द्र सिंह, ऋषि उद्यान, अजमेर १०. श्री इन्द्रलाल आर्य, राजसमन्द ११. श्री विजय सिंह गहलोत व श्रीमती कंचन गहलोत, ऋषि उद्यान, अजमेर १२. श्रीमती मिथिलेश आर्य, ऋषि उद्यान, अजमेर १३. श्री ओमप्रकाश आर्य, मथुरा १४. श्रीमती सन्तरा देवी, रोहतक १५. श्रीमती अन्शु मिश्रा, लखनऊ १६. श्री वीरेन्द्र कुमार, पटियाला १७. श्री दिनेश बख्शी, दिल्ली १८. श्री अशोक कुमार आर्य, ब्यावर, अजमेर १९. श्री अमित श्रीवास्तव, जयपुर २०. श्रीमती यामिनी त्रिवेदी, लखनऊ २१. श्री विष्णुगोपाल तारामणि सोमानी, अजमेर २२. श्रीमती अंजलि आनन्द, नोएडा, गाजियाबाद २३. श्री जगराम आर्य व श्रीमती चमेली देवी, जगरावां, महेन्द्रगढ़ २४. श्री बदनसिंह शर्मा, फरीदाबाद २५. श्री सुरेन्द्र सिंह यादव व श्रीमती सोना देवी, नई दिल्ली २६. श्री जितेन्द्र कुमार यादव, रेवाड़ी २७. डॉ. वेदप्रकाश 'विद्यार्थी', नई दिल्ली २८. श्री छाजूराम कोकचा, कोटपुतली २९. डॉ. बद्रीप्रसाद पञ्चोली, अजमेर ३०. श्री श्रद्धानन्द, दिल्ली ३१. श्री रामनिवास, हिसार ३२. श्री अनिल, हिसार ३३. श्री मगन धाकड़, अजमेर ३४. श्री रायसिंह, कैथल ३५. श्रीमती सरला मेहता, अजमेर ३६. श्री विजय सिंह आर्य व श्रीमती कँचन आर्य ३७. श्री विक्की, सहारनपुर ३८. श्री रामदयाल गौतम, बड़ी खुर्द। ३९. श्री जयचन्द आर्य, मेरठ ४. डॉ. इन्दुशेखर पञ्चोली, अजमेर।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१६ जून से १५ जुलाई २०१८ तक)

जून- १. श्रीमती मिथिलेश आर्य, ऋषि उद्यान, अजमेर २. श्री कन्हैयालाल, अजमेर ३. श्रीमती पुष्पलता उपाध्याय, अजमेर ४. श्रीमती प्रकाशवती, सोनीपत ५. श्रीमती कमला शारदा, अजमेर ६. श्रीमती पदमा व श्री मनोज शर्मा, जयपुर ७. मै. हीरो मोटोकॉर्प, नई दिल्ली ८. श्रीमती पूनम सन्धू, कैथल ९. श्री वीरेन्द्र कुमार गोस्वामी, दिल्ली १०. श्री

बिशनदास शर्मा, शिमला।

जुलाई- १. श्री जेठू सिंह यादव व श्रीमती शकुन्तला यादव, बीकानेर २. श्री रामस्वरूप, अम्बाला ३. श्रीमती सरोज राजपूत, इटारसी ४. श्री आर. नरेन्द्र होशंगाबाद ५. श्रीमती तारावती, मथुरा ६. श्री दिलीप सिंह आर्य, चण्डीगढ़ ७. श्री रामसिंह, कैथल ८. श्री नत्थीलाल शर्मा, अलीगढ़ ९. श्रीमती हरप्यारी देवी, दिल्ली १०. श्री सन्दीप, सोनीपत ११. श्री बलवान सिंह आर्य, बुलन्दशहर १२. श्री राम कुमार, करनाल १३. श्रीमती चन्द्रकला, महेन्द्रगढ़ १४. श्री जगराम आर्य, जगरावां, महेन्द्रगढ़ १५. श्री हरिओम शास्त्री, फरीदाबाद १६. श्री सरयूप्रसाद पटेल, मेरठ १७. श्री सत्यनारायण मनोज कुमार राठी, कोलकाता १८. श्री मुमुक्षु मुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर १९. श्री रमेश मुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर २०. डॉ. किशोर काबरा, ऋषि उद्यान, अजमेर २१. श्रीमती सरला मेहता, अजमेर २२. श्री प्रीतम आर्य, जीन्द २३. श्री भँवरलाल शर्मा, जोधपुर २४. श्री विजय सिंह गहलोत व श्रीमती कंचन गहलोत, ऋषि उद्यान, अजमेर २५. श्रीमती मिथिलेश आर्य, ऋषि उद्यान, अजमेर २६. श्री ब्रजपाल सिंह, मुजफ्फरनगर २७. श्री दुर्जन सिंह, लखनऊ २८. श्री दिनेश कुमार, जीन्द २९. श्री लक्ष्मण आर्यमुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर ३०. श्रीमती मैना देवी, अजमेर ३१. श्रीमती रमा देवी आर्य, महेन्द्रगढ़ ३२. श्रीमती स्मारिका वैश्य, लखनऊ ३३. श्रीमती वेदवती आर्य, रोहतक ३४. श्री महेशचन्द्र गर्ग, जयपुर ३५. श्रीमती सन्तरा देवी, रोहतक ३६. श्री शिवप्रताप सिंह, गाजियाबाद ३७. श्री धर्मवीर सिंह, नई दिल्ली ३८. श्री ओमपाल सिंह, बुलन्दशहर ३९. श्री सूरजमल राठी, सोनीपत ४०. श्री मनोज कुमार आर्य, दिल्ली ४१. श्रीमती मीरा आर्य, दिल्ली ४२. श्री मुकुट बिहारी आर्य, बरेली ४३. डॉ. वेदप्रकाश 'विद्यार्थी', नई दिल्ली ४४. श्री सत्यनारायण गोयल, अजमेर ४५. श्री ओमप्रकाश अजमेरा, अजमेर ४६. डॉ. बद्रीप्रसाद पञ्चोली, अजमेर ४७. डॉ. किशोर काबरा, ऋषि उद्यान, अजमेर ४८. श्री विजय सिंह आर्य व श्रीमती कंचन आर्य, अजमेर ४९. ठाकुर विक्रमसिंह, दिल्ली ५०. श्री एस.डी. बाहेती, अजमेर ५१. श्री भंवरलाल राठौड़, शाहजहाँपुर ५२. श्री राजीव अरोड़ा, चरखीदादरी ५३. श्रीमती मिथिलेश आर्य, ऋषि उद्यान, अजमेर ५४. श्री द्वारका प्रसाद श्री जगदीश तापड़िया, कुचामन सिटी, नागौर ५५. श्री रामशंकर सिंह, पटना।

परोपकारी के पाठकों से निवेदन

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

प्रिय पाठकगण, सादर नमस्ते!

आप जैसे सहृदय पाठकों से निवेदन है कि आपकी प्रिय पत्रिका हम आपकी सेवा में निरन्तर प्रेषित कर रहे हैं ताकि युगनिर्माता महर्षि दयानन्द सरस्वती के लोकोपकारी एवं धार्मिक सन्देश जन-जन तक पहुँच सकें तथा उन कल्याणकारी विचारों को पढ़कर प्रत्येक पाठक सदाचारी, धर्मप्रेमी एवं वैदिक विचारधारा का अनुयायी बनकर वर्तमान में प्रचलित पाखण्ड, अन्धविश्वास को छोड़कर बुद्धिजीवी, तार्किक एवं सत्यान्वेषी बनकर समाज में व्याप्त कुरीतियों, कुसंस्कारों से मुक्त रहे।

सज्जनो, हम इस पत्रिका की लाभ-हानि की बात नहीं कर रहे। इस निवेदन में केवल इतना जान लें कि पैसा भी किसी संस्था के प्रचार के लिए आवश्यक है। बहुत से महानुभावों का वार्षिक शुल्क हमें निरन्तर प्राप्त हो रहा है, परन्तु कुछ सदस्यों का शुल्क आता ही नहीं है, वर्षों तक रुका रहता है, पुनरपि उन्हें पत्रिका भेजी ही जाती है। अतः ऐसे सज्जनों से निवेदन है कि परोपकारिणी सभा के बैंक खाते में सदस्यता की रकम जमा कराकर इस पावन पत्रिका के निरन्तर प्रकाशन में आर्थिक सहयोग देकर इस धर्म के स्रोत को जारी रखने की कृपा करें।

आशा है आप महानुभाव वार्षिक शुल्क भिजवाकर हमारा उत्साह निरन्तर बढ़ाते रहेंगे।

सब व्यवहार करने वालों को चाहिये कि जो मनुष्य जिस काम में चतुर हो उसको उसी काम में प्रवृत्त करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.२०

'नमस्ते' उपन्यास–एक मॉरिशसीय गाँव में भारतीय लोक जीवन का आख्यान

रणजीत पांचाले

हिन्द महासागर में स्थित द्वीपदेश मॉरिशस में ६७ प्रतिशत आबादी भारतवंशियों की है। यह देश १७१४ से १८१० तक फ्रांसीसियों के अधिकार में रहा और १८१० में ब्रिटेन ने इस पर कब्जा कर लिया। ब्रिटिश शासन के बावजूद यहाँ फ्रांसीसी भाषा और संस्कृति का प्रभाव यथावत बना रहा। गोरे फ्रांसीसियों के पास जो सम्पत्ति थी वह भी उन्हीं के पास रही। मॉरिशस की भूमि को उपजाऊ बनाने तथा वहां गन्ने की खेती कराने के लिए अंग्रेज १८३४ से १९२३ तक भारत से मजदूर ले जाते रहे, जिनकी पहचान वहाँ 'गिरमिटिया' के रूप में थी। ये गिरमिटिया समुद्री जहाजों में भारी कष्ट झेलकर वहां पहुंचे थे और गोरों (फ्रांसीसी तथा ब्रिटिश) ने उन पर जुल्मों की सारी सीमाएं तोड़ दी थीं। अत्यन्त विषम परिस्थितियों में भी उन्होंने अपनी भाषा तथा संस्कृति को बनाए रखा। विशेषकर, बीसवीं सदी के आरम्भ में मॉरिशस में आर्यसमाज आन्दोलन आरम्भ हो जाने से लोगों में काफी जागरूकता आई और वे स्वाधीन होने के लिए प्रयत्न करने लगे।

'नमस्ते' लघु उपन्यास १९६८ में मॉरिशस के स्वाधीन होने से तीन वर्ष पूर्व लिखा गया था। देश में रहने वाले भारतवंशियों के जीवन पर यह पहला उपन्यास था जिसे फ्रेंचभाषी मॉरिशसीय साहित्यकार **मार्सेल काबों** ने लिखा था। उस समय इस उपन्यास ने द्वीप के साहित्यप्रेमियों का ध्यान आकर्षित किया, किन्तु कुछ वर्षों में ही यह विस्मृति के कोहरे में चला गया। हाल ही में मॉरिशस के हिन्दी विद्वान् प्रहलाद रामशरण के संपादन में यह उपन्यास पहली बार हिंदी में नई दिल्ली के हिंदी बुक सेंटर से प्रकाशित हुआ है। इसकी भूमिका में भारतीय साहित्यकार कमल किशोर गोयनका ने लिखा है–'फ्रेंच लेखक मार्सेल काबों ने मॉरिशस के 'वाले दे प्रेत' गांव के रमणीय तथा शांतिपूर्ण परिवेश में रहकर भारतीय प्रवासियों के लोक–जीवन की मार्मिक कथा की रचना की है। इससे मॉरिशस का ही नहीं, भारत का हिंदी साहित्य भी समृद्ध हुआ है।'

अपने संपादकीय में प्रहलाद रामशरण ने इस बात को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना है कि मार्सेल काबों ने उपन्यास की शुरूआत स्वामी दयानन्द के ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' के उस अंश से की है जिसमें कहा गया है कि 'प्रसव में माँ और उसके बच्चे का बड़ा ध्यान रखा जाना चाहिए। जब माँ और बच्चे को उष्ण जल से स्नान करा दिया जाए और घर को पूर्ण रूप से साफ कर दिया जाए, तब होम करना चाहिए। फिर पिता बच्चे के कान में कहेगा – 'तेरा नाम वेद है।' और उसके बाद घी और मधु मिलाकर सोने की लेखनी से बच्चे की जीभ पर 'ओ३म्' लिखेगा। बच्चा उस घी और मधु को सोने की लेखनी को कुछ घड़ी चाटेगा, इसके बाद बच्चे को माँ के हाथों में सौंप दिया जाएगा।' **एक फ्रेंचभाषी लेखक द्वारा १९६५ में 'नमस्ते' का प्रणयन करते समय पराधीन मॉरिशस में स्वामी दयानन्द के उक्त ग्रन्थ के तृतीय अध्याय के एक अंश से पुस्तक का आरम्भ करना अत्यन्त असाधारण बात थी जिसकी ओर अधिकांश मॉरिशसीय हिंदी विद्वानों ने ध्यान नहीं दिया।**

'नमस्ते' उपन्यास का कथानक बहुत सरल है। इसका नायक राम मॉरिशस के '**ब्रादो**' ग्राम से 'वाले दे प्रेत' गाँव आया है। यहाँ वह अपने मृत चाचा शिव द्वारा छोड़ी गई सड़क और पहाड़ के बीच की चार बीघा ज़मीन, एक गाय, दो बकरियों और चूल्हे के नीचे गड़े रुपयों का स्वामी बन गया है। वह बेहद परिश्रमी तथा शिक्षित युवा है। वह अपने कर्म से लोगों के समक्ष उदाहरण प्रस्तुत करता है। उसने खेत के बंजर भागों को भी नदी किनारे की मिट्टी लाकर उपजाऊ बना दिया है। आरम्भ में ग्रामवासी उससे दूरी बनाकर रहते हैं। लेकिन दूसरों की सहायता के लिए सदैव तत्पर रहने वाले इस युवा ने एक दिन गाँव में आए भयंकर तूफान के समय उनकी मदद करके यह दूरी खत्म कर दी। राम और गाँव वालों के बीच आत्मीयता उत्पन्न करने में 'नमस्ते' अभिवादन का

भी विशेष योगदान रहा। राम ने अपने कार्यों से ग्रामवासियों के सामने नए-नए विकल्प प्रस्तुत किए। उसके द्वारा बनाए गए तालाब को देखकर गाँव का किसुन भी एक तालाब बना लेता है।

राम ने अपने गाँव सहित आस-पास के गाँवों में शिक्षा का प्रकाश भी फैलाया। चार गाँवों के बच्चों को आर्यसमाज आंदोलन से परिचित कराया। उन्हें **संध्या** करना सिखाया। 'नमस्ते' अभिवादन भी देश में आर्यसमाज आन्दोलन का ही हिस्सा था। राम ने बच्चों को अपने साथ गाँव के बाहर घुमाते हुए प्रत्यक्ष चीजों के बारे में जानकारी देकर शिक्षा के क्षेत्र में नया प्रयोग किया। राम की पहल से ही दुखी नामक व्यक्ति के घर के सामने से जाने वाले रास्ते को खोला गया ताकि लोगों को नदी तक पहुँचने में कम समय लगे। वह एक सुंदर युवक था। उसका विवाह बेलतेर गाँव की सुंदर युवती उमावती के साथ हुआ। विवाह के बाद राम के लिए जीवन में सब कुछ बदल गया। उमावती की राम के साथ छेड़छाड़, गहरा प्रेम, क्षणिक नाराजगी और उसके अल्हड़पन का वर्णन उपन्यास की रोचकता बढ़ाता है।

एक दिन वाले-दे-प्रेत गांव में भयंकर तूफान आया। मूसलाधार वर्षा हुई। शाक-सब्जी, अन्न-दाना सब कुछ बह गया। अनेक झोंपड़ियाँ तथा जानवर भी बह गए। यह तफ़ान राम का सब कुछ ले गया। उसकी गर्भवती पत्नी उमावती की मौत हो गई। उसके जानवर मर गए या खो गए। इस हादसे ने राम को पूरी तरह तोड़ दिया। वह विक्षिप्त-सा हो गया। हादसे से पहले वह अपने घर में एक नन्हें मेहमान के आने का इंतजार कर रहा था। अब उसके सारे सपने चूर-चूर हो चुके थे। विक्षिप्तावस्था में एक दिन वह गाँव की एक नवयुवती कमला का बच्चा उठाकर भाग गया। अगली सुबह वह बच्चा मृत पाया गया और कुछ समय बाद राम की भी मृत्यु हो गई। राम, जो कि परिवर्तनकामी और साहसी था, उसके ऐसे दुःखद अन्त से पाठक निराश होता है। उपन्यास का विकास बहुत प्रभावी ढंग से हुआ है, परन्तु अन्तिम भाग में आकर यह कुछ कमजोर पड़ गया है।

इस कमी के बावजूद इस उपन्यास का महत्त्व इसलिए भी है कि एक फ्रेंचभाषी लेखक ने भारतवंशियों के बीच रहकर उनके मनोभावों, संस्कृति और इतिहास को अच्छी तरह समझकर इसे लिखा है। इसीलिए कहीं भी इसमें उन मजदूरों की भारतीयता के वर्णन में कोई त्रुटि नहीं है। स्वयं फ्रांसीसी मूल का होने के बावजूद मार्सल काबों ने फ्रांसीसी गोरों द्वारा मॉरिशस के भारतवंशियों पर किए गए जुल्मों का पूरी ईमानदारी से वर्णन किया है। एक स्थान पर वे लिखते हैं- "फिर मॉरिशस टापू के वे शुरू के वर्ष, दुःख और अपमान से भरा जीवन और इतने लम्बे समय किसी अन्य देश में, जहाँ गन्ने उपजाए जाते और उसके बदले में मुट्ठी भर चावल, भूख और ठंड। एक दिन राम ने अपने दादा से सुना था कि उनके एक मित्र ने कारखाने की भट्टी में कूदकर आत्महत्या कर ली क्योंकि बड़े साहब ने उसे एक जबरदस्त लात मारी थी।" (पृष्ठ ३५)

काबों कवि थे। इसीलिए उनका गद्य भी काव्यमय है। उपमाओं और रूपकों की प्रचुरता है। उपन्यास का भाषायी सौंदर्य पाठक को अन्त तक बाँधे रखता है। अपने दिलचस्प कथ्य और कहन की उत्कृष्ट शैली के कारण यह उपन्यास मॉरिशसीय साहित्य की बहुमूल्य निधि बन गया है।

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

वैदिक पुस्तकालय अजमेर द्वारा प्रकाशित नये संस्करण

ईश्वर (वैज्ञानिकों की दृष्टि में), प्रस्तुतकर्ता एवं अनुवादक - पं. क्षितीश कुमार वेदालङ्कार

मूल्य -१५० रु., **पृष्ठ** - २६४

दुनिया में दो तरह के मनुष्य पाये जाते हैं, एक वो जो भगवान् को अर्थात् उसके अस्तित्व को स्वीकार करते हैं और दूसरे वे जो भगवान् जैसी किसी सत्ता पर भरोसा नहीं करते। पहले को आस्तिक और दूसरे को नास्तिक कहा जाता है। नास्तिकों के अपने तर्क हैं और इन तर्कों में वे प्राय: वैज्ञानिक प्रयोगों, आविष्कारों, विज्ञान की प्रगति की दलीलों का ही हवाला देते हैं। विज्ञान है तो बहुत अच्छी चीज़, पर अगर कहीं किसी वैज्ञानिक की चूक से कुछ गलत निष्कर्ष आ जाये तो उसे आंखें बन्द करके मान लिया जाता है। आखिर वैज्ञानिक भी तो मनुष्य ही है, गलती तो वह भी करता ही है। इस तरह एक नये प्रकार का अन्धविश्वास 'वैज्ञानिक अन्धविश्वास' जन्म लेता है और दो अन्धविश्वास आपस में टकरा जाते हैं। जो भगवान् को नहीं मानता, वह भी सोचना नहीं चाहता, केवल दूसरों के भरोसे चलता है और जो मानता है, उसने भी अपना दिमाग बाबाओं के पल्ले बाँध रखा है। इन दोनों से अलग कुछ ऐसे भी होते हैं जो अपने मस्तिष्क को थोड़ा मेहनत करने देते हैं और सत्य तक पहुँचने का प्रयास करते हैं। ऐसे ही कुछ वैज्ञानिकों के विचारों को इस पुस्तक में संकलित किया गया है। जरूरी नहीं कि ये सभी वैज्ञानिक भगवान् को स्वीकार करते ही हों, पर वह इतना तो स्वीकार करते ही हैं कि कुछ तो है जो विज्ञान की पकड़ से बाहर है। उनकी इसी 'ना' में शायद 'हाँ' छिपी है, बस अन्तर इतना ही है कि उनकी वह खोज बिना नाम वाली है और वेद ने उसको नाम दे दिया है- 'ईश्वर'।

त्रैतवाद- लेखक-विद्यामार्तण्ड पंडित बुद्धदेव विद्यालङ्कार

मूल्य-२० रु., **पृष्ठ** -४०

परिचय- पं. बुद्धदेव जी एक बार अपने आर्य मित्र के पास मिलने गये। उन्होंने देखा कि मित्र का बड़ा बेटा कम्युनिस्ट विचारधारा से बहुत अधिक प्रभावित है। कारण यह कि वह देश-विदेश में घूमकर आया है और किताबें भी कम्युनिज़्म की ही पढ़ता है। पंडित जी ने वह पुस्तक मांगी, जिससे कम्युनिज़म का सबसे अधिक प्रभाव पड़ा था। उस पुस्तक का नाम था The Origin of life on the Earth, जिसका विषय था, 'पृथ्वी पर पहली बार जीवन कैसे आया?' बुद्धदेव जी ने इस पुस्तक को आद्योपान्त पढ़कर इसकी समीक्षा की और उस समीक्षा की एक पुस्तक बन गई- त्रैतवाद।

आख्यातिक- लेखक- महर्षि दयानन्द सरस्वती

मूल्य- २५० रु. , **पृष्ठ** - ६०८

परिचय- महर्षि दयानन्द सरस्वती आर्ष ग्रन्थों के अध्ययन पर बहुत बल देते थे। विशेषकर व्याकरण पर, जो कि सब शास्त्रों की कुंजी है। संस्कृत व्याकरण को सरल एवं सुगम बनाने के लिये उन्होंने पाणिनीय व्याकरण के सहायक ग्रन्थों के रूप में 'वेदांग प्रकाश' नाम से १४ पुस्तकें लिखीं। उनमें से आठवाँ भाग यह 'आख्यातिक' है। इसमें मूलत: धातु पाठ की व्याख्या है। साथ ही उन धातुओं के रूप निर्माण की प्रक्रिया को भी समझाया गया है।

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाता धारक का नाम - **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर।**

बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

लौकिक एवं पारलौकिक सुखों का आधार ईश्वर प्रणिधान

प्रकाश चौधरी

समर्पण अर्थात् स्वयं को या अपने कार्यों या किसी विशेष वस्तु को श्रद्धापूर्वक सौंप देना। अध्यात्म क्षेत्र में ईश्वर-भक्ति, ईश्वर-साधना, ईश्वर में पूर्ण विश्वास, आस्था रखना ईश्वर के प्रति समर्पण है। इसी को ईश्वर-प्रणिधान कहा गया है। ईश्वर- प्रणिधान ही एक ऐसा साधन है, जिसने भी इसे अपना लिया उसको अनेक प्रकार के आध्यात्मिक तथा सांसारिक दोनों सुख प्राप्त हो सकते हैं। केवल सांसारिक सुख प्राप्ति का साधन है धर्मपूर्वक अर्थ अर्जन करना। उससे अपने सुख साधनों का (भवन, वाहन, सम्पत्ति आदि) प्राप्त करना है। दान आदि करना, यात्रा करना आदि। लेकिन ईश्वर प्रणिधान ऐसा साधन है जिसमें लौकिक सुख तथा पारलौकिक सुख अर्थात् ईश्वरीय कृपा तथा ईश्वरीय आनन्द की प्राप्ति हो सकती है। ईश्वरीय आनन्द पाना ही वास्तव में मनुष्य जीवन का मुख्य उद्देश्य है।

जीवन में जब तक धर्म तथा ईश्वर-प्रणिधान की वृद्धि नहीं होती तो व्यक्ति दोनों सुखों से वंचित रह जाता है। आज का धनी व्यक्ति कई वर्ष पूर्व जब निर्धन था, हर प्रकार से अभावग्रस्त था, परन्तु धर्मानुसार उसका जीवन था, परोपकारी था, सत्संगी था, स्वाध्यायशील था, सुखी था, निर्भय था, परन्तु आज समृद्ध है, किसी वस्तु का अभाव नहीं, धन, संपत्ति, सेवक सब कुछ-लेकिन निर्भय नहीं। वह चिन्ताग्रस्त है, प्रसन्नता का अभाव है। न दान के लिए, न परोपकार के लिए समय है न भावना। कारण, धन की वृद्धि हुई, धर्म की वृद्धि नहीं कर पाया वह। यही स्थिति धार्मिक क्षेत्र में भी है। एक व्यक्ति जिसे अध्यात्म में रुचि है, वह ईश्वर-प्राप्ति की जिज्ञासा में सारे ग्रन्थों का ज्ञान प्राप्त करता है। सेवा, सहनशीलता, सत्यता आदि गुणों को धारण करता है। ज्ञानी बन जाने पर उसे अभिमान होने लगता है, अशान्त रहता है, उसमें स्वार्थ, कठोरता, कपटता के अवगुण दिखाई देने लगते हैं। क्योंकि उसमें ईश्वर प्रेम, निष्ठा, जिज्ञासा, श्रद्धा का अभाव हो जाता है। वह केवल शब्द मात्र एवं व्याकरण ज्ञान में ही उलझ जाता है। क्योंकि ज्ञान-वृद्धि तो हुई, परन्तु ईश्वर प्रणिधान की वृद्धि नहीं हुई। अतः धर्म और ईश्वर-प्रणिधान ही दो साधन हैं जिनसे व्यक्ति लौकिक व पारलौकिक सुख एवं आनन्द प्राप्त करता है। ईश्वर-प्रणिधान तो व्यक्ति का ऐसा साधन है कि वह अपने मार्ग में आने वाली प्रत्येक बाधा का निवारण कर लेता है। स्वार्थी, लोभी व्यक्ति भी यदि ईश्वर-प्रणिधान से युक्त हो जाये तो वह भी इन दोषों से मुक्त हो जाता है। जैसे कोई व्यक्ति अग्निशामक वस्त्र पहनकर अग्नि में प्रवेश करके भी सुरक्षित बाहर आ जाता है उसी प्रकार ईश्वर-प्रणिधान को धारण करने वाला व्यक्ति संसार की दूषित एवं पापमयी प्रवृत्तियों से बाहर निकल आता है।

ईश्वर-प्रणिधान क्या है? योग दर्शन में इसकी परिभाषा करते हुए कहा गया है कि मनुष्य अपने हर कार्य को ईश्वर को साक्षी मान कर करता है और उसके बदले में किसी प्रकार के फल की इच्छा नहीं करता-यही ईश्वर-प्रणिधान है। व्यास जी लिखते हैं कि ईश्वर की प्रत्येक आज्ञा का पालन श्रद्धा से करना ईश्वर-प्रणिधान है। ईश्वर में अपने मन को स्थिर करना ईश्वर प्रणिधान है। तात्पर्य यह है कि ईश्वर को समर्पित होना ईश्वर-समर्पण या ईश्वर-प्रणिधान है जो लौकिक एवं पारलौकिक दोनों प्रकार के सुख प्राप्त करवाता है।

जीवन में इस समर्पण का अत्यधिक महत्त्व है। जहाँ ईश्वर-प्रणिधान है वहाँ का वातावरण धर्म, प्रसन्नता, ज्ञान, निर्भयता और आनन्द से परिपूर्ण होता है, इसके विपरीत क्लेश, अविद्या, बन्धन, भय आदि का वातावरण होता है। जहाँ ईश्वर-प्रणिधान है वहाँ किसी प्रकार का अभाव पीड़ा नहीं देता। व्यक्ति अधिक आनन्दित होता है उस धनी की अपेक्षा जो धनिक नहीं है। इस मार्ग पर चलने हेतु यह भी आवश्यक होगा कि हम ईश्वर-प्रणिधान के स्वरूप को जानें और उसे आचरण में लाएं। केवल ज्ञान प्राप्ति कितनी भी हो जाये, यदि ईश्वर-प्रणिधान के स्वरूप को नहीं समझा तो व्यक्ति उसी प्रकार से भयभीत व क्लेशों से

घिरा ही रहेगा। ज्ञान-प्राप्ति का अन्तिम लक्ष्य यही है कि हम यम-नियमों का पालन करें, तृष्णाओं का त्याग हो, वैराग्य प्राप्त कर ईश्वर समर्पण का भाव उत्पन्न करें और उस परमपिता परमेश्वर को प्राप्त करें। इसके लिए आवश्यक है हम ज्ञान-प्राप्ति के साथ-साथ उस ईश्वर में पूर्ण निष्ठा, प्रेम, श्रद्धा, अनुराग एवं भक्ति का भाव रखें और निर्भय बनें। शास्त्र कहता है कि योग, ईश्वर प्रणिधान से ही समाधि की सिद्धि होती है।

साधन बताते हुए दर्शन कहता है कि ईश्वर को समर्पित होने के लिए उसके गुण, कर्म व स्वाभाव को जानना आवश्यक है। जो जितना अधिक गुणों को जानता है उसका समर्पण-भाव भी उतना अधिक होगा। इसके लिए स्वाध्याय, चिंतन-मनन, विद्वानों का संग, ईश्वर-विषय पर चर्चा निरन्तर करते रहना चाहिए। वेद-शास्त्रों के अध्ययन से ईश्वर के अधिक से अधिक गुणों का ज्ञान करना चाहिए। जो जगत् हम देखते हैं ये प्राणी-जगत्, ग्रह-उपग्रह, सारे लोक-लोकान्तर सब उसी के ज्ञान-बल- क्रिया से सत्ता में आता है। सुख-साधन, धन-ऐश्वर्य, शरीर, इन्द्रियाँ सब उसकी देन हैं। यदि वह अपना हाथ हटा ले तो सब जगत् निराधार हो कर ढह जाए। वेदानुसार उसकी आज्ञा में रहकर ही जीवन के सारे कार्य, व्यवहार करना उचित है। हमारा प्रत्येक कार्य, भोजन, शयन, पठन-पाठन, व्यायाम-सेवा परोपकार ईश्वर-प्राप्ति के उद्देश्य के लिए होना चाहिए। दैनिक व्यवहार में, हर कार्य में हर समय ईश्वर की उपस्थिति महसूस करनी चाहिए। मैं उस अनन्त गुणों के भण्डार की रक्षा में हूँ। वह मेरी प्रत्येक क्रिया को (मन, वाणी, शरीर की) देख और सुन रहा है। एक प्रकार से यह एक पवित्र साधना है, साधक को अन्त:वृत्तिक होना चाहिए। बाह्य विषयों को छोड़कर आन्तरिक विषयों का चिन्तन मनन करते रहना चाहिए। अभ्यास, मौन व्रत, प्रतिज्ञा करते हुए अन्त:वृत्तिक बना जा सकता है। व्याप्य-व्यापक भाव अर्थात् मैं ईश्वर में हूँ, ईश्वर मुझ में है ऐसा सोचना चाहिए। इस अभ्यास से ही उच्चकोटि का ईश्वर-प्रणिधान बन जायेगा। व्यक्ति एवं साधक को अनावश्यक विषयों एवं बातों का त्याग करना चाहिए। राग-रहित होकर, विवेकशील होकर आवश्यक वस्तुओं का उपयोग करना, बार-बार जागृत होने वाली अनावश्यक इच्छाओं को छोड़ना आवश्कयक है। आत्मनिरीक्षण कर अपने दोषों को अपने राग-स्तर को जान-समझकर उन्हें दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए।

राग की भाँति एक और विषय है जो ईश्वर समर्पण में बाधक है 'मैं और मेरा' भाव। अधिकार अर्थात् 'स्व-स्वामी सम्बन्ध'। यह ऐसा विषय है जो व्यक्ति को अविवेकी बनाता है। जितनी अधिक अधिकार-भावना है उतना ही न्यून ईश्वर-प्रणिधान होगा। संसार की प्रत्येक वस्तु ईश्वर की देन है- सबका समान अधिकार है उस पर। इन दोनों राग और स्वामित्व के दोषों को समझना, इनका चिन्तन करना आवश्यक है। साधक को तो जीवात्मा, ईश्वर, संसार की नित्यता-अनित्यता, कर्म- फल, व्याप्य-व्यापक भाव को समझना-जानना आवश्यक है। उसे संयोग-वियोग के सिद्धान्त को जानना होगा। आत्मा ही सत्य है। शरीर मरणधर्मा है। जन्म से पूर्व और मृत्यु के उपरान्त ये सब कुछ न मेरा था, न रहेगा। थोड़ा सा मध्यकाल ही ममत्व में बदल जाता है। सबसे मोह, राग अपनापन लगने लगता है। रागवश व्यक्ति भूल जाता है कि जिससे संयोग हुआ है उससे वियोग भी होगा। यह ममत्व ईश्वर से जुड़ने नहीं देता। इसे तोड़ने का एक सरल साधन है- 'अपरिग्रह'। आवश्यक वस्तुओं की प्राप्ति, उनकी रक्षा, उनकी वृद्धि तथा उपयोग करते हुए भी उनमें राग-स्वामित्व की भावना से दूर रहना चाहिए।

अत: ईश्वर-प्रणिधान के लिए ईश्वर के प्रति श्रद्धा, प्रेम, विश्वास उत्पन्न होना चाहिए। वेदों के ज्ञाता, गुरु एवं विद्वानों के सन्निकट रह के इस संसार की सत्यता को जानना, ईश्वर का स्वरूप जानना, सत्संग-स्वाध्याय आदि करना उस ईश्वर की महत्ता, बल, शक्ति आदि का अन्वेषण करना चाहिए। उसकी रचनाओं को गंभीरता से देखने से ईश्वर का बोध होता है। एक छोटी-सी आँख कितना बड़ा संसार देख लेती है, ऐसे ही प्रत्येक अंग, प्रत्येक वस्तु किसी न किसी प्रयोजन के लिए बनाई है उस ईश्वर ने। हमें उसका सही उपयोग आवश्यकता अनुसार करना चाहिए। अपने भोजन, दिनचर्या को शुद्ध रखना, यम-नियम का पालन करते हुए उस परमेश्वर के संरक्षण में रहना चाहिए। यही ईश्वर-प्रणिधान एवं ईश्वर के प्रति सर्मपण है।

परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें, अन्यथा शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। **परोपकारी पत्रिका कार्यालय से निरन्तर भेजी जाती है, फिर भी जिन लोगों के पास पत्रिका का कोई अंक प्राप्त ना हुआ हो तो कृपया पत्र या दूरभाष द्वारा हमें सूचित करें, ताकि हम वह अंक पुनः भेज सकें, साथ ही अपने डाकघर में इसकी जाँच आदि भी करें।**

धनराशि भेजने हेतु सूचना

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित सभा है एवं उनके कार्यों को आगे बढ़ाने के लिय कृत-संकल्प है। सभा द्वारा ऋषि के स्वप्नानुरूप गुरुकुल, संन्यास एवं वानप्रस्थाश्रम, ध्यान शिविर, वैदिक साहित्य का प्रकाशन, देश में प्रचार, परोपकारी पत्रिका के माध्यम से जन-जागरण, भव्य अतिथिशाला, भोजनशाला आदि अनेक प्रकल्पों का संचालन हो रहा है। ये सभी कार्य आर्यजनों के सात्विक दान से ही होते हैं। अत: दानी महानुभावों से निवेदन है कि वेद, ईश्वर, दयानन्द के इस कार्य में अपना सहयोग अवश्य प्रदान करें।

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उन पर '**परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया, राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

IFSC - IBKL0000091

२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।

IFSC - SBIN0007959

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं, वैसे ही जगदीश्वर सब को उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४१

वैचारिक क्रान्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

शङ्का समाधान – ३०

डॉ. वेदपाल, मेरठ

शङ्का- पञ्चावयवयोगात् सुखसंवित्तिः - सांख्य दर्शन ५.२७ सूत्र का अर्थ कुछ विद्वान् तो 'पाँच इन्द्रियों के योग से सुख-दुःख आदि का अनुभव होता है।' यह अर्थ मानते हैं तथा कुछ विद्वान् 'पाँच अवयव अर्थात् प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण, उपनय और निगमन से अर्थ मानते हैं।' इस सूत्र का अर्थ क्या होना चाहिए?

स्वामी जिलानन्द, बिजोपुरा, मुजफ्फरनगर।

समाधान- आपकी शङ्का का मूल सांख्य दर्शन के उपर्युद्धत सूत्र की व्याख्या का अर्थवैभिन्न्य है। तद्यथा-

१. स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती ने- "सुखादि पदार्थों की सिद्धि पंचावयव वाक्य से होती है।...पंचावयव वाक्य से सुखादि की संवित्ति इस तरह होती है कि प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण, उपनय और निगमन इन पाँचों को सुख में, इस तरह लगाना चाहिए..." सां. द. तृतीय संस्करण, लाहौर, फरवरी १९२६, पृ. १४०-१४१

२. आचार्य आनन्दप्रकाश- "(पंचावयव योगात्) पाँच ज्ञानेन्द्रियों के योग से (सुखसंवित्तिः) सुख वा दुःख की प्राप्ति जीव को होती है।" - सां. द. प्रथम संस्करण, आलियाबाद, आ. प्र., जून २००८, पृ. २८६

स्वामी जगदीश्वरानन्द (षड्दर्शनम्-संस्करण १९९४, पृ. १२७, प्रकाशक-विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द, दिल्ली) का अर्थ आचार्य आनन्दप्रकाश के सदृश ही है।

सुख-दुःख आदि गुण हैं। न्यायदर्शनकार ने- "**इच्छा-द्वेषप्रयत्नसुखदुःखज्ञानान्यात्मनो लिङ्गम्**"- १.१.१० तथा वैशेषिककार ने- "**प्राणापाननिमेषोन्मेषजीवनमनोगतीन्द्रियान्तरविकाराः सुखदुःखेच्छाद्वेषप्रयत्नाश्चात्मनो लिङ्गानि**" -३.२.४ सुख-दुःख को आत्मा का गुण कहा है। इन सुख-दुःख का अनुभव आत्मा को-आत्मा, इन्द्रिय, मन और विषय के परस्पर सम्बन्ध से होता है। तद्यथा- "**आत्मेन्द्रियमनोऽर्थसन्निकर्षात् सुख-दुःखे**"वै. द. ५.२.१५

सुख-दुःख की अनुभूति की प्रक्रिया में अर्थ-विषय का साक्षात् सम्बन्ध सम्बद्ध इन्द्रिय (यथा चक्षु का रूप, रसना का रस तथा श्रोत्र का शब्द से आदि) से, इन्द्रिय का सम्बन्ध मन से तथा मन का सम्बन्ध आत्मा से होना अपेक्षित है। इस प्रक्रिया के पूर्ण होने पर ही अनुकूल या प्रतिकूल वेदन-अनुभूति होती है। यह अनुभूति ही सुख या दुःख नाम से कही जाती है। यह ज्ञान जन्यज्ञान की श्रेणी के अन्तर्गत है। जन्यज्ञान के लिए ज्ञानेन्द्रियाँ महत्त्वपूर्ण हैं।

पाँच इन्द्रियों के योग से सुख-दुःख का अनुभव होता है का अभिप्राय इतना ही समझना चाहिए कि पाँचों इन्द्रियों में से किसी एक इन्द्रिय का स्वविषय के साथ सम्बन्ध होने पर उपलब्ध ज्ञान से उत्पन्न होने वाला परिणाम यदि अनुकूल वेदन-अनुभूति उत्पन्न करता है तो वह अनुभूति सुख तथा प्रतिकूल वेदन-अनुभूति होने पर दुःख है। एक समय में यह योग सामान्यतः किसी एक इन्द्रिय तथा अपवादस्वरूप एकाधिक इन्द्रिय का सम्भव है, किन्तु एकाधिक इन्द्रिय के योग से उत्पन्न परिणाम-ज्ञान में पौर्वापर्य होगा।

सूत्रार्थ- सूत्रस्थ '**पञ्चावयवयोगात्**' इस समस्त पद के 'पञ्चावयव' पद से स्वामी दर्शनानन्द न्यायोक्त-प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण, उपनय, निगमन इन पाँच तथा स्वामी जगदीश्वरानन्द आदि प्रतिज्ञा आदि के स्थान पर पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ ग्रहण करते हैं। 'सुखसंवित्तिः' पद का अर्थ दोनों ही सुख की अनुभूति करते हैं। 'सुखसंवित्तिः' पद भी समस्त पद है। यद्यपि आचार्य आनन्द प्रकाश एवं स्वामी जगदीश्वरानन्द ने विग्रह प्रदर्शित नहीं किया है, किन्तु उनके अभिमत अर्थ की दृष्टि से विग्रह होगा- '**सुखस्य संवित्तिः सुखसंवित्तिः**'**। यहां संवित्तिः पद सम्+विद्लृ लाभे+क्तिन् पूर्वक निष्पन्न मानना चाहिए।**

सूत्रार्थ निर्धारण से पूर्व प्रसंग पर विचार अपेक्षित है। सूत्रकार ने ५.२० से धर्माधर्म का प्रसंग प्रारम्भ किया है-

'**न धर्मापलापः प्रकृति कार्य वैचित्र्यात्**'- प्रकृति

के कार्यों के वैचित्र्य से धर्माधर्म का अपलाप-उपेक्षा नहीं कर सकते हैं। पच्चीसवें सूत्र में-

'**अन्तःकरणधर्मत्वं धर्मादीनाम्**'- धर्म आदि (धर्म, अधर्म, सुख-दुःख आदि) अन्तःकरण के धर्म हैं। छब्बीसवें सूत्र में-

'**गुणादीनाञ्च नात्यन्तबाधः**'-अन्तःकरण के धर्म-अधर्म रूप गुणों का अत्यन्त बाध अर्थात् स्वरूप से बाध-अभाव-नाश नहीं होता है, किन्तु संसर्ग से बाध होता है। जिस प्रकार जल का गुण शीतलता है, किन्तु अग्नि के संसर्ग से शीतलता का बाध (अर्थात् जल उष्ण) हो जाता है, किन्तु जल की यह उष्णता अग्नि के संसर्ग तक या कुछ काल पश्चात् तक रहती है और जल पुनः शीतल हो जाता है। इसी प्रकार जीव के अधर्म का बाध विवेक ज्ञान होने पर हो जाता है, किन्तु वह आत्यन्तिक नहीं होता है। पुनः सत्ताइसवें सूत्र में-

'**पञ्चावयवयोगात् सुखसंवित्तिः**'

यहाँ पूर्व सूत्र पच्चीस से 'धर्मादीनाम्' तथा सूत्र छब्बीस से 'गुणादीनां' पद की अनुवृत्ति आ रही है। अतः सूत्रार्थ होगा कि- **पञ्चावयव योग- (न्याय प्रोक्त-प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण, उपनय, निगमन) से गुणादि=धर्मादि का ज्ञान सुखपूर्वक-सुगमतापूर्वक-सरलता से हो जाता है।**

सूत्रस्थ 'सुखसंवित्तिः' पद में तृतीया तत्पुरुष समास मानने पर 'सुखेन अनायासेन संवित्तिः सुखसंवित्तिः' अर्थ स्पष्ट हो जाता है कि धर्म क्या है? अधर्म क्या है? सुख क्या है? दुःख क्या है? आदि के अर्थ ज्ञान में पञ्चावयव वाक्य सहायक होकर उक्त धर्मादि का ज्ञान सुगमतापूर्वक हो जाता है। सम्+विद् ज्ञाने+क्तिन्=संवित्तिः।

अतः प्रसंग को दृष्टिगत रखकर कहा जा सकता कि **पञ्चावयव के योग से धर्म आदि (सुख-दुःख भी) का ज्ञान सुगमतापूर्वक हो जाता है।** न्यायोक्त पञ्चावयव सुखादि की अनुभूति में किस प्रकार सहायक हैं? इसे अनुभूति में सहायक मानने वालों ने स्पष्ट नहीं किया है।

एक आहुति
अपने आचार्य के लिए........

ऋषि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा की तन, मन, धन से सेवा करने वाले, उसे अपनी मातृवत् समझने वाले और यहाँ तक कि अपना जीवन समर्पित कर देने वाले डॉ. धर्मवीर आज अपना समस्त भार आर्य जनता अर्थात् अपने उत्तराधिकारियों पर छोड़ गये हैं। उन्होंने ऋषि के स्वप्नों को अपना कर्त्तव्य समझकर सभा को गगनचुंबी ऊँचाइयों तक पहुँचाया। अनेक नये प्रकल्प चलाये यथा-वैदिक गुरुकुल, गौशाला, आश्रम, अतिथियों के ठहरने व खान-पान की निःशुल्क व्यवस्था आदि। उन्होंने जो-जो कार्य छेड़े उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति में कभी न्यूनता न आने दी। परोपकारिणी सभा ऐसे पुत्र को प्राप्त कर गौरव का अनुभव करती है और बिछुड़कर शोकग्रस्त होने का भी। उनके द्वारा शुरु किये कार्य कभी शिथिल न पड़ें, इस कारण **सभा ने डॉ. धर्मवीर जी की स्मृति में एक करोड़ रु. की स्थिर निधि बनाने का संकल्प लिया है,** जिससे कि धन धर्म के काम आ सके। इसमें सन्देह नहीं कि ये समस्त कार्य आर्य जनता के सहयोग से ही प्रारम्भ हो सके हैं और सहयोग से ही चल भी रहे हैं। इसलिये इसमें भी सन्देह नहीं कि सभा के इस संकल्प को आर्य जनता शीघ्र पूर्णता की ओर पहुँचा देगी और शायद उससे भी कहीं बढ़कर। यज्ञ तो हवि माँगता है। बिना हवि के यज्ञ की कल्पना भी क्या? बस देरी तो सूचित होने की है। हवि बनना तो आर्यों के खून में है, तन से, मन से अथवा धन से।

आप अपना दान चैक, ड्राफ्ट या सभा के खाते में सीधे भी भेज सकते हैं। कृपया, राशि भेजने के पश्चात् सभा में दूरभाष या पत्र द्वारा अवश्य सूचित कर दें।

- मन्त्री

संस्था समाचार

पुण्यतिथि पर यज्ञ- ऋषि उद्यान की भव्य यज्ञशाला में १० जुलाई को श्री विजय गहलोत एवं श्रीमती कञ्चन गहलोत ने अपनी माता श्रीमती निर्मला गहलोत की पुण्यतिथि पर यज्ञ किया।

अतिथि- अजमेर नगर में केसरगंज स्थित ऐतिहासिक महर्षि दयानन्द आश्रम, वैदिक यन्त्रालय, अनुसन्धान भवन एवं वैदिक पुस्तकालय, ऋषि निर्वाण स्थल-भिनाय कोठी, अन्त्येष्टि स्थल-मलूसर, ऋषि उद्यान स्थित महर्षि दयानन्द सरस्वती संग्रहालय, महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल आदि महत्त्वपूर्ण स्थानों को देखने, संन्यासियों-विद्वानों से मिलकर शंका-समाधान करने, उपदेश ग्रहण करने, व्याकरण-दर्शन आदि शास्त्रों का अध्ययन करने, दैनिक यज्ञ एवं प्रवचन से लाभ लेने, पुष्कर आदि पर्यटनस्थलों में भ्रमण एवं आर्यसमाज के प्रचार के लिए देश-विदेश के संन्यासी, वानप्रस्थी, विद्वान्, पुरोहित, ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारिणी, आर्यवीर, आर्यवीरांगना, आर्यसमाज के कार्यकर्त्ता, गृहस्थ स्त्री-पुरुष और बच्चे निरन्तर आते रहते हैं। सभी आगन्तुकों के निवास एवं नाश्ता, भोजन, दूध आदि की समुचित व्यवस्था ऋषि उद्यान में उपलब्ध रहती है। पिछले १५ दिनों में नई दिल्ली, महबूबनगर, छिन्दवाड़ा, नीमच, शाजापुर, बांसवाड़ा, हिसार, रोहतक, नागौर, भरतपुर, नसीराबाद, टोंक, बयाना, भीलवाड़ा, जोधपुर, जयपुर, बहरोड़ आदि स्थानों से ५१ अतिथि ऋषि उद्यान पधारे।

दैनिक प्रवचन-प्रातः कालीन सत्संग में आचार्य सत्येन्द्र आर्य, आचार्य सोमदेव आर्य, आचार्य कर्मवीर आर्य और स्वामी ब्रह्मानन्द के व्याख्यान हुए। सायंकाल सत्संग में आचार्य सत्येन्द्र आर्य ने ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका का पाठ करवाया तथा व्याख्यान दिया। शनिवार सायंकालीन सत्संग में श्रीमती सीता, श्री विजय गहलोत एवं ब्र. ज्ञानप्रकाश ने भजन सुनाया। रविवार सायंकालीन प्रवचन में ब्र. अग्निवेश, ब्र. चन्द्रदेव एवं ब्र. प्रदीप ने व्याख्यान किया, ब्र. ज्ञानप्रकाश ने भजन सुनाया। सायंकालीन सत्संग में ब्र. रविशंकर ने व्याख्यान किया।

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को स्थान दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अतः सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अतः लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हों। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छः माह या अधिक समय भी लग सकता है, अतः कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें।

-संपादक

ओ३म्

परोपकारिणी सभा

दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर (राज.) पिन. ३०५००१ दूरभाष– ०१४५–२४६०१६४

वेदगोष्ठी–२०१८

मान्यवर सादर नमस्ते।

आशा करता हूँ कि आप स्वस्थ सानन्द होंगे। आपको सुविदित है कि सद्भावी विद्वानों के सहयोग से सदा की भांति इस वर्ष भी अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ, दिल्ली तथा अनुसंधान विभाग परोपकारिणी सभा, अजमेर के संयुक्त तत्त्वावधान में ऋषि मेले के अवसर पर वेदगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है। इस गोष्ठी में देश के अनेक भागों से पधारे प्रख्यात वैदिक विद्वान् निर्धारित विषयों पर अपने शोधपूर्ण विचार प्रस्तुत करते हैं। इनमें से चुने हुए शोध–पत्र परोपकारी व वेदपीठ की शोध–पत्रिका के माध्यम से प्रकाशित किये जाते हैं। जिससे जो लोग गोष्ठी में नहीं आ सकते वे भी लाभान्वित होते हैं। विद्वानों को भी इस विषय पर अधिक विचार करने का अवसर मिलता है। गत ३० वर्षों से गोष्ठी का आयोजन निरन्तर किया जा रहा है। अब तक निम्नलिखित बिन्दुओं पर विचार किया जा चुका है:–

१. ऋषि दयानन्द की वेदभाष्य शैली।	१२ नवम्बर, १९८८
२. वेद और कर्मकाण्डीय विनियोग।	०५ नवम्बर, १९८९
३. अथर्ववेद समस्या और समाधान।	२७ नवम्बर, १९९०
४. वेद और विदेशी विद्वान्।	१६ नवम्बर, १९९१
५. वैदिक आख्यानों का वास्तविक स्वरूप।	०१ नवम्बर, १९९२
६. वेदों के दार्शनिक विचार।	२८ नवम्बर, १९९३
७. सोम का वैदिक स्वरूप।	१२ नवम्बर, १९९४
८. पर्यावरण समस्या का वैदिक समाधान।	०३ नवम्बर, १९९५
९. वैदिक समाज व्यवस्था।	०१ नवम्बर, १९९६
१०. वेद और राष्ट्र।	२४ अक्टूबर, १९९७
११. वेद और विज्ञान।	०९ अक्टूबर, १९९८
१२. वेद और ज्योतिष।	१० नवम्बर, १९९९
१३. वेद और पदार्थ विज्ञान	०३ नवम्बर, २०००
१४. वेद और निरुक्त	१८ नवम्बर २००१
१५. वेद में इतिहास नहीं	०१ नवम्बर २००२
१६. वेद में कृषि व वनस्पति विज्ञान	३१ अक्टूबर २००३
१७. वेद में शिल्प	१९ नवम्बर २००४
१८. वेदों में अध्यात्म	११ नवम्बर, २००५
१९. वेदों में राजनीतिक चिन्तन	२७ नवम्बर, २००६
२०. वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है	१६ नवम्बर, २००७
२१. वैदिक समाज विज्ञान	०५ नवम्बर, २००८
२२. सत्यार्थप्रकाश का ७ वाँ समुल्लास व वेद	२३ अक्टूबर, २००९
२३. सत्यार्थप्रकाश का ८ वाँ समुल्लास व वेद	१२ नवम्बर, २०१०
२४. सत्यार्थप्रकाश का ९ वाँ समुल्लास व वेद	०४ नवम्बर, २०११
२५. महर्षिदयानन्दाभिमत मन्तव्यः वैदिक परिप्रेक्ष्य	१६ नवम्बर, २०१२
२६. वेद और सत्यार्थप्रकाश का १२वाँ समुल्लास	८ नवम्बर, २०१३
२७. भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद	३१ अक्टू. १,२ नव., २०१४
२८. भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद	२०,२१,२२ नव., २०१५
२९. दयानन्द दर्शन की वेदमूलकता	४,५,६ नव., २०१६
३०. वेदों में शिक्षा के सिद्धान्त	२७,२८,२९ अक्टू., २०१७

।।ओ३म्।।

वेद गोष्ठी २०१८ के लिए निर्धारित विषय

षड्दर्शनों की वेदमूलकता और महर्षि दयानन्द

उपशीर्षक :

०१. वेदों में दर्शन तत्त्व की विवेचना
०२. वेदों में षड्दर्शनों के मूलतत्त्व की मीमांसा
०३. महर्षि दयानन्द के चिन्तन में षड्दर्शनों की वेदमूलकता
०४. षड्दर्शनों में ईश्वर-विचार और उनकी वेदमूलकता
०५. षड्दर्शनों में प्रमाण-विचार और महर्षि दयानन्द
०६. षड्दर्शनों में जगत् का सम्प्रत्यय और उसकी वेदमूलकता
०७. षड्दर्शनों में जीव सिद्धान्त या जीवात्मा का सिद्धान्त और महर्षि दयानन्द
०८. षड्दर्शनों की वेदमूलकता और मुक्ति विचार के सन्दर्भ में महर्षि दयानन्द
०९. षड्दर्शनों की वेदमूलकता प्रत्यक्ष प्रमाण के सन्दर्भ में- एक विवेचना
१०. षड्दर्शनों में अनुमान प्रमाण की वेदमूलकता का समीक्षात्मक विशेषण
११. षड्दर्शनों में बन्धन का सिद्धान्त और वेदमूलकता
१२. वेदों के सन्दर्भ में षड्दर्शनों की प्रमुख मान्यताएँ और महर्षि दयानन्द
१३. षड्दर्शनों में मोक्ष प्राप्ति के साधन और महर्षि दयानन्द
१४. षड्दर्शनों में सत् के स्वरूप की वेदमूलकता और महर्षि दयानन्द
१५. षड्दर्शनों में कर्म सिद्धान्त और महर्षि दयानन्द
१६. षड्दर्शनों में पदार्थ विवेचन और महर्षि दयानन्द
१७. षड्दर्शनों में ब्रह्म एवं जीव सम्बन्धों की विवेचना की वेदमूलकता और महर्षि दयानन्द
१८. षड्दर्शनों के समन्वय की वेदमूलकता और महर्षि दयानन्द
१९. षड्दर्शनों में वेद विचार और महर्षि दयानन्द
२०. षड्दर्शनों में त्रैतवाद की वेदमूलकता और महर्षि दयानन्द
२१. महर्षि दयानन्द के अनुसार षड्दर्शनों का समन्वय
२२. वैशेषिक दर्शन की वेदमूलकता
२३. न्याय दर्शन की वेदमूलकता
२४. सांख्य दर्शन की वेदमूलकता
२५. योग दर्शन की वेदमूलकता
२६. मीमांसा दर्शन की वेदमूलकता
२७. वेदान्त दर्शन की वेदमूलकता
२८. वेदान्त दर्शन में वर्णित ब्रह्म के स्वरूप की वेदमन्त्रों से पुष्टि।

सहायक सन्दर्भ ग्रन्थ

०१. षड्दर्शन समन्वय- श्री प्रशान्त आचार्य
०२. आचार्य उदयवीर शास्त्री का षड्दर्शन भाष्य एवं विवेचना ग्रन्थ
०३. योग दर्शन भाष्य-पं. राजवीर शास्त्री
०४. स्वामी ब्रह्ममुनि के दर्शन भाष्य
०५. स्वामी दर्शनानन्द जी के दर्शन भाष्य
०६. भारतीय दर्शन (दो भाग)- डॉ. राधाकृष्णन्
०७. महर्षि दयानन्द सरस्वती के समस्त ग्रन्थ
०८. दर्शन तत्त्व विवेक- आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री
०९. षड्दर्शन समन्वय-पं. विद्यानन्द शर्मा
१०. भारतीय दर्शन का सर्वेक्षण- एम. हिरियन्ना
११. भारतीय दर्शन-एस.एन. दासगुप्त
१२. भारतीय दर्शन-दन्त एवं चटर्जी
१३. भारतीय दर्शन- एन.के. देवराज
१४. भारतीय दर्शन-जी.डी. शर्मा
१५. भारतीय दर्शन-उमेश मिश्र
१६. भारतीय दर्शन-बलदेव उपाध्याय
१७. सिक्स सिस्टम ऑफ इण्डियन फिलॉस्फी- एफ. मैक्समूलर
१८. रिचर्ड गार्वे- सांख्य फिलॉस्फी

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

"गीता आर्यसमाजी हो गई"

स्वामी विवेकानन्द सरस्वती

प्रबुद्ध-सुधी पाठकों को यह शीर्षक आश्चर्यचकित करने वाला प्रतीत होगा, किन्तु यह शीर्षक बहुत पुराना है। जब पण्डित बुद्धदेव जी विद्यालंकार गुरुकुल कांगड़ी के उत्सव पर पधारे हुए थे, प्रात:काल गंगा के तट पर बैठकर तन्मयता से वे गीता का पाठ (पारायण) कर रहे थे। इस दृश्य को देखकर एक पौराणिक व्यक्ति जो पूज्य स्वामी (समर्पणानन्द) जी को पहचानते थे, उन्होंने अपने एक आर्यसमाजी मित्र को संकेत करते हुए कहा कि जादू वह जो सिर पर चढ़कर बोले, देखो तुम्हारे आर्यसमाज के धुरन्धर विद्वान् भी कितनी तन्मयता से गीता का पाठ कर रहे हैं। वह आर्यसमाजी व्यक्ति पण्डित जी को गीता का पाठ करते हुए देखकर स्तब्ध रह गया और वह इतना विचलित हो गया कि पाठ करते हुए ही श्री पण्डित जी के निकट जाकर उनसे कहने लगा कि- क्या पण्डित जी आप पौराणिक हो गये? पण्डित जी ने तत्काल उसे पूछा कि- तुमको किसने कह दिया कि मैं पौराणिक हो गया? तब प्रश्नकर्त्ता ने कहा कि यह तो प्रत्यक्ष ही है कि आप वेद, सत्यार्थ-प्रकाश आदि का पाठ न करके गीता का इतनी तन्मयता से पाठ कर रहे हैं। 'तो गीता का पाठ करने मात्र से तुम्हारी दृष्टि में मैं पौराणिक हो गया, तुम्हें ज्ञात नहीं **गीता आर्यसमाजी हो गयी है, क्योंकि इसका पाठ बुद्धदेव कर रहा है।**' प्रश्नकर्त्ता महोदय अट्टहास करने लगे और उनके पौराणिक मित्र पर जो आघात हुआ उससे वे अति लज्जित हुए।

इस घटना को लिखने का तात्पर्य यही है कि जिस प्रकार से पण्डित जी ने शतपथ ब्राह्मण के उद्धार का बीड़ा उठाया था, उसी प्रकार से उन्होंने गीता के उद्धार का भी संकल्प लिया था और उनका नियम था कि 'जब तक मैं गीता की वैदिक व्याख्या नहीं लिख लूँगा, तब तक इसका प्रतिदिन पाठ करता रहूँगा।' इसकी सत्यापना माता शकुन्तला गोयल, (मेरठ) जो एक सुप्रसिद्ध स्वतन्त्रता सेनानी एवं आर्यसमाज की कार्यकर्त्री थीं, जो सन् १९५१ में मेरठ में सम्पन्न होने वाले सार्वदेशिक आर्यमहासम्मेलन की स्वागताध्यक्षा तथा मॉरिशस में होने वाले आर्यमहिला सम्मेलन की अध्यक्षा भी थीं, उन्होंने बताया कि 'जब भी कभी पण्डित जी मेरठ कार्यक्रम में आते थे तो हमारा घर ही उनका आवास होता था। मैंने उनको तीन बजे प्रात: उठकर गीता का पाठ करते हुए बहुधा देखा है।' सन् १९६४ में जब गीता-भाष्य पूर्ण हो गया तभी उन्होंने अपने नियमित गीतापाठ के क्रम का परित्याग किया।

गीता पर अनेक भाष्य हुए। आद्य शंकराचार्य जी महाराज के भाष्य से पहले भी गीता पर अनेक भाष्य थे, इसका ज्ञान हमें श्री आचार्य जी के भाष्य से ही होता है, किन्तु आश्चर्य है कि आचार्य जी के भाष्य से पूर्ववर्त्ती भाष्य हमें उपलब्ध नहीं होते। पूज्य स्वामी जी ने भी मल्लिनाथ के भाव को जो उन्होंने महाकवि कालिदास के टीकाकारों पर बिगड़ते हुए लिखा है-

भारती कालिदासस्य दुर्व्याख्या विषमूर्च्छिता।
एषा संजीवनी टीका तामद्योज्जीवयिष्यति॥

इन्हीं भावों से ओत-प्रोत होकर लिखा है कि 'गीता के जितने भी अपभाष्य हुए हैं, उनका समाधान करते हुए मैं यह भाष्य लिख रहा हूँ।'

अस्तु जब स्वामी जी ने गीता के आर्यसमाजी होने का डिण्डिम घोष किया तो आर्य पुरुषों की जिज्ञासा वृद्धि को प्राप्त हुई कि 'अन्तत: वे कौन-सी पंक्तियाँ हैं, जिनका पण्डित जी ने वैदिक अर्थ किया है', तो हम उद्धृत कर रहे हैं। उनके प्रथमाध्याय की व्याख्या का एक स्थल- "महाभारत का युद्ध भारत के इतिहास की एक सच्ची घटना है, कपोल-कल्पना नहीं। उस घटना का प्रयोग महाकवि वेदव्यास जी ने मनुष्य को धर्म का सच्चा स्वरूप दिखाने के लिए अपने काव्य में किया है और दैवी सम्पत्ति की सेना के संचालक का स्वरूप योगिराज कृष्ण को दिया है। भाव कृष्ण वार्ष्णेय के, शब्द कृष्ण द्वैपायन के, घटना इतिहास की। "**अहो लोकोत्तर: संगम:।**" यहाँ इन तीन-चार पंक्तियों के द्वारा ही पण्डित जी ने गीता को अनैतिहासिक कहने वालों के दुर्ग को ध्वस्त कर दिया, अन्यथा आधुनिक

गीता के व्याख्याता तो अपनी मनमानी, मिथ्या कल्पना करते रहते थे। अब गीता के जो श्लोक पौराणिकता की पुष्टि में उद्धृत किये जाते थे–

कुलक्षये प्रणश्यन्ति कुलधर्माः सनातनाः।
धर्मे नष्टे कुलं कृत्स्नमधर्मोऽभिभवत्युत॥ १.४०

इसका अर्थ करते हुए तथा उसकी विशेष व्याख्या करते हुए श्री पण्डित जी ने लिखा है–'उत्तम कुलों के क्षय हो जाने पर कुल–परम्पराएँ नष्ट हो जाती हैं, और उन परम्पराओं के नष्ट होने पर अधर्म सम्पूर्ण कुल को दबा लेता है। (विशेष व्याख्या) 'हर उत्तम कुल की कुछ पवित्र परम्पराएँ और एक न एक लोक–कल्याणकारी संकल्प होता है, जो हर संकट में उन्हें बड़े से बड़ा बलिदान करने के लिए प्रेरित करता है। ये सब कुल–धर्म कहलाते हैं, किन्तु कुल के नेताओं के मारे जाने पर ये सनातन कुल–धर्म नष्ट हो जाते हैं। धर्म के नष्ट होने पर जब उस कुल के सदस्यों के सामने बलिदान के लिए प्रेरणा देने वाला कोई लक्ष्य नहीं रहता तो सारे कुल में स्वार्थ और आपाधापी का बोलबाला हो जाता है और अधर्म सारे कुल को दबा लेता है।'

अधर्माभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः।
स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्णेय जायते वर्णसंकरः॥ १.४१

हे कृष्ण! अधर्म के अधिक बढ़ जाने पर कुल की स्त्रियाँ दूषित हो जाती हैं। हे वार्ष्णेय! स्त्रियों के दूषित हो जाने पर वर्णसंकर उत्पन्न होता है। (विशेष व्याख्या) हे कृष्ण! इस संसार में धर्म तथा उच्च भावनाओं का अन्तिम दुर्ग 'स्त्री–हृदय' है। किन्तु जब चारों ओर अधर्म का बोलबाला हो जाता है तो यह अन्तिम दुर्ग भी टूट जाता है। एक तो चुनाव का क्षेत्र संकुचित हो जाने से विवाह भी गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार नहीं हो पाते और गुप्त व्यभिचार भी बहुत फैल जाता है, तो चारों ओर स्त्रियों के दूषित हो जाने से हे वार्ष्णेय! वर्णसंकर फैल जाता है।

संकरो नरकायैव कुलघ्नानां कुलस्य च।
पतन्ति पितरो ह्येषां लुप्तपिण्डोदकक्रियाः॥ १.४२

जहाँ वर्णसंकर विवाह होता है अथवा व्यभिचार होता है, वहाँ परस्पर गुण, कर्म, स्वभाव न मिलने से कुल नरक बन जाता है और इस प्रकार के कुलघाती और वह कुल जहाँ इस प्रकार के लोग हों, नरक जीवन बनाने के लिए ही साधन करते हैं और जब युद्ध में जवान लोग मारे जाते हैं तो बूढ़े लोगों को आपातकाल में वानप्रस्थाश्रम छोड़कर घर सम्भालना पड़ता है तथा जीवन भर की सैनिक–वृत्ति छोड़कर लकड़ियों की टाल खोलने जैसा कार्य करना पड़ता है। इस प्रकार वे वर्ण और आश्रम दोनों ओर से पतित होते हैं, क्योंकि उन बूढ़ों और छोटे बच्चों को पिण्ड तथा उदक अर्थात् अन्न और जल देने वाला कोई नहीं रहता। यहाँ आपने गीता के पिण्डदान के समर्थक श्लोकों की व्याख्या पण्डित जी द्वारा की हुई पढ़ी।

अब गीता के वे गूढ़–स्थल जिनकी कि पूर्ववर्त्ती आचार्यों ने तथा परवर्त्ती हिन्दी के गीता व्याख्याकारों ने व्याख्या की है, वह अनावश्यक, अतिविस्तृत, खींचातानी से परिपूर्ण तथा अप्रासंगिक हैं। उसकी व्याख्या पण्डित जी के द्वारा लिखी हुई देखें–

कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः।
अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः॥ ४.१७

मनुष्य को कर्म का भी ज्ञान प्राप्त करना है। जैसे– क्षत्रिय का धर्म है आततायी को मारना, यह कर्म का ज्ञान है। विकर्म को भी जानना है, जैसे– कोई पागल आततायी हो जाये तो उसको बाँधना तथा चिकित्सा करनी, किन्तु प्राणदण्ड नहीं देना, किन्तु यदि भूल से उसे प्राणदण्ड दे दिया तो यह विकर्म हुआ। इस विकर्म अर्थात् विपरीत कर्म का भी ज्ञान होना चाहिए। फिर अकर्म का भी ज्ञान होना चाहिए। यदि कोई आलस्यवश अकर्मण्य होकर पड़ रहा है तो यह अनुचित अकर्मण्यता है, किन्तु यदि कोई मनुष्य क्षमा करने से सुधर सकता हो तो उसे दण्ड न देना शुभ अकर्मण्यता है। इसका ज्ञान अकर्म का ज्ञान है। कर्म, अकर्म तथा विकर्म इन तीनों का ज्ञान ठीक–ठीक होना चाहिए। इस प्रकार कर्म, अकर्म तथा विकर्म तीनों का यथार्थ ज्ञान होने से कल्याण होता है। इस कर्म की गति का ठीक ज्ञान होना बड़ा कठिन है। इसलिए कहा **'गहना कर्मणो गतिः'**।

कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्म यः।
स बुद्धिमान् मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत्॥ ४.१८

हर शुभ कर्म किसी अवस्था–विशेष में अशुभ कर्म

हो जाता है। उदाहरणार्थ- यदि कोई सिपाही राष्ट्र के किसी दुर्ग की अथवा नाके की रक्षार्थ पहरा दे रहा हो, तो उस समय संध्योपासना की वेला प्राप्त होने पर सिपाही का संध्योपासना में लीन हो जाना घोर अशुभ है, सो इस कर्म में कब अकर्मता आ गई, यह जो जानता है तथा अकर्म में कर्म को जानता है, जैसे शत्रु अपनी रक्षा के लिए गौवें आगे करके राष्ट्र का नाश करने आवे तो उस समय गोहत्या अशुभ-कर्म में कर्त्तव्य अर्थात् शुभ-कर्मत्व आ जाता है। जैसे- अर्जुन के लिए अन्याय का पक्ष लेकर सामने आए गुरु तथा पितामह का वध अकर्म में कर्म हुआ। जो इस तत्त्व को देख ले, वही मनुष्यों में बुद्धिमान् मनुष्य है। उसे ही युक्तियुक्त मनुष्य समझना और वह पूर्ण कार्य करता है, क्योंकि उसने कर्म के पूरे रूप को-उत्सर्गापवाद दोनों को जान लिया।

यस्य सर्वे समारम्भाः कामसंकल्पवर्जिताः।
ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पण्डितं बुधाः॥ ४.१९

हे अर्जुन ! मनुष्य को कर्म से अकर्म में तथा अकर्म से कर्म में आसक्ति घसीट ले जाती है। राष्ट्र पर शत्रुओं के आक्रमण होने पर शत्रु की ढाल बनी हुई गौवों को मारना यद्यपि देखने में अकर्म है, किन्तु वास्तव में भविष्य में आने वाले लाखों गो-भक्तों और गौवों के वध को बचाने का साधन होने के कारण वह प्रत्यक्ष अकर्म गोवध वास्तव में कर्म है, किन्तु यह बात गोरक्षा में आसक्त होने वाले को नहीं सूझती। इसलिए जिस मनुष्य के सम्पूर्ण कार्यारम्भ काम संकल्प अर्थात् व्यक्तिगत सुख-दुःख की कामना के संकल्प से वर्जित होते हैं, उसे यह यथार्थ ज्ञान हो जाता है कि जो कर्त्तव्य दीखता है, वह कब परित्याज्य है? और जो कर्म अकर्त्तव्य दीखता है, वह कब किन अवस्थाओं में ग्राह्य है? इसलिए उसके कर्मों में फलाशक्ति का अंश यथार्थ-ज्ञानरूपी अग्नि से जलकर भस्म हो जाता है और वह हर कर्म को विवेकयुक्त सीमा तक करता है। इस प्रकार के ज्ञानाग्निदग्ध-कर्मा मनुष्य को बुद्धिमान् लोग पण्डित कहते हैं।

कुछ और विवादास्पद श्लोकों के भी अर्थ जिसका वैदिक भाष्य पूज्य पण्डित जी ने किया है, इसका भी एक निदर्शन स्वरूप लीजिए-

अग्निर्ज्योतिरहः शुक्लः षण्मासा उत्तरायणम्।
तत्र प्रयाता गच्छन्ति ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः॥ ८.२४

जिस प्रकार सृष्टि तथा प्रलय को ब्रह्म-दिन तथा ब्रह्म-रात्रि का नाम दिया है इसी प्रकार मनुष्य जीवन को एक वर्ष मान लें तो यौवन तक उसका शुक्ल-पक्ष है तथा वृद्धावस्था के आरम्भ से रात्रि है तथा मृत्यु अमावस्या है। इसी प्रकार जब उसके हृदय में प्रभु का प्रेम तथा ज्ञान का प्रकाश हो, वीर्य की ज्ञानाग्नि में आहुति होती हो, वह दिन है तथा जब उसकी कामेच्छा अथवा शयनेच्छा जागती हो, वह रात्रि है। जीवनभर जितना समय उसने उन्नति की ओर जागने में लगाया हो, वह उसका उत्+तर+अयन है तथा जब वह नानाविध भोगादि समृद्धि की ओर जाता हो, वह सकाम जीवन का काल दक्षिणायन है। हो सकता है बहुत से मनुष्यों में उत्तरायण कभी आता ही न हो, परन्तु ये दो परिभाषाएँ हैं, इन्हें समझने पर ही यह श्लोक समझ में आएगा। अग्नि की ज्वाला सदा ऊपर को उठती है। इसी प्रकार ब्राह्मणत्व, क्षत्रियत्व, वैश्यत्व अथवा अन्य भी कोई लोक-कल्याणकारी व्रत मनुष्य ने अपने जीवन में लिया है, वह उसे परमात्मा से मिलाता है तथा उसके वीर्य की रक्षा करता है। इस प्रकार वीर्य (स्थूल शरीर का सूर्य), ज्ञान (सूक्ष्म शरीर का सूर्य) तथा परमात्मा (सारे ब्रह्माण्ड का सूर्य) इन तीनों की ओर ले जाने वाली आग जब किसी के हृदय में दहक रही हो, वह अग्निज्योति का काल है। उसके अन्दर जब ज्ञान का प्रकाश हो वह दिन का समय है। युवावस्था वाली स्वास्थ्य-सम्पत्ति हो (चाहे आयु कुछ भी हो) वह शुक्ल पक्ष है। मन में ऊँचे से ऊँचा, और अधिक ऊँचा उठने का दृढ़ संकल्प हो वह उत्तरायण काल है। इस काल में मृत्यु को प्राप्त हुए ब्रह्मवित् जन ब्रह्म के पास जाते हैं। दूसरी ओर धुआँ यद्यपि आग की गर्मी तथा वायु के वेग से ऊपर उठता है तथापि शनैः-शनैः नीचे आकर किसी वस्तु पर जम जाता है। इस प्रकार आलस्यमयी तमोवृत्ति, आराम-पसन्द मनोवृत्ति जो धक्का देने से बड़ी कठिनता से ऊपर उठे, वह धूम है। ऐसी धूमिल ज्योति हो, अज्ञान की रात्रि हो, वृद्धावस्था की चेष्टाहीनता हो (चाहे आयु यौन की ही हो) अर्थात् कृष्ण पक्ष हो तथा नाना काम-भोग रूप समृद्धि की अभिलाषा

बनी हो, वह दक्षिणायन है। उसके लिए कहा–

धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः षण्मासा दक्षिणायनम्।
तत्रा चान्द्रमसं ज्योतिर्योगी प्राप्य निवर्तते॥ ८.२५

धूमिल ज्योति हो, रात्रि की वेला हो अर्थात् तमोगुण का प्राबल्य हो, कृष्णपक्ष अर्थात् मन्द स्वास्थ्य का बुढ़ापा हो, तो सूर्यज्योति नहीं किन्तु चन्द्र–ज्योति प्राप्त हुई। उनकी प्रभु–भक्ति चन्द्रमा के समान कीर्ति, धन आदि अथवा सन्तान की कामना से प्रकाशित है। इसलिए इस दक्षिणायन काल में मृत्यु को प्राप्त योगी फिर कर्त्तव्यपालन से विमुख होकर बारम्बार फिर–फिर साधना करने के लिए विवश होता है (पूर्वाभ्यासेन तेनैवह्रियते ह्यवशोऽपि सः। ४.४४) यह आवृत्ति–मार्ग है।

वक्तुमर्हस्यशेषेण दिव्या ह्यात्मविभूतयः।
याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि॥ १०.१६

हे कृष्ण! योगविद्या से आत्मा को बहुत विभूतियाँ प्राप्त होती हैं। वे दिव्य हैं अर्थात् देवाधिदेव भगवान् के चिन्तन से प्राप्त होती हैं। आप कहते हैं कि मैंने भी वहीं से पाई हैं। आप पूर्ण योगी हैं, अपनी योग–विभूति के बल से जिस लोक–लोकान्तर का ज्ञान प्राप्त करना चाहें तुरन्त वहाँ पहुँचकर जान लेते हैं। उन विभूतियों के भण्डार भगवान् का साक्षात् करने से ही वे विभूतियाँ आपको प्राप्त हुई हैं। सो जिन विभूतियों से वह विश्वव्यापी ज्ञान आपको प्राप्त हुआ है जिससे आप जिस लोक–लोकान्तर में पहुँचना चाहें पहुँच जाते हैं, उनका वर्णन पूर्ण रूप से मुझे भी करके बताइये।

हन्त ते कथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतयः।
प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे॥ १०.१९

हे कुरुश्रेष्ठ! यह तुमने सच कहा–आत्मा को जो विभूति मिलती है, वह दिव्य होती है अर्थात् देवाधिदेव भगवान् की कृपा से मिलती है। पर यह तो देखो कि उस प्रभु की विभूतियों का तो अन्त ही नहीं, प्रभु की विभूतियों का तो कहना ही क्या! मैंने उस देवाधिदेव से जो विभूतियाँ पाई हैं उनका विस्तार करने लगूँ तो उनका ही अन्त नहीं। इसलिये वह प्रभु मुझे क्या उपदेश करता है? मैं उसे किन विभूतियों में देखता हूँ? यह उसके बड़े–बड़े प्रधान गुणों के आधार पर तुझे सुनाता हूँ।

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुच॥ १८.६६

हे अर्जुन! तुझे यह सन्देह कैसे हो गया कि मैं तुझे पाप करने की सलाह भी दे सकता हूँ, पाप करने की सलाह देने की बात तो दूर रही, तू निश्चय रख कि तेरे हृदय में कोई पाप वासना उठती होगी तो उसे भी मैं उभरने नहीं दूँगा। इसलिये तेरी तो मैं भक्त और सखा होने के कारण व्यक्तिगत रूप से जिम्मेवारी लेता हूँ, तू और सब धर्म छोड़कर एक ही धर्म पकड़ ले कि मेरी शरण में आ जा, मैं तुझे सब प्रकार के पाप भावों से (पाप फलों से नहीं) छुड़ा दूँगा। तू दुःख मत मान।

इस प्रकार से गीता के आर्यसमाजी होने का स्वामी समर्पणानन्द जी के भाष्य से परिलक्षित होता है। विशेषरूप से तो हमारे जिज्ञासु पाठक उनके भाष्य से ही अपनी जिज्ञासा का शमन करने में समर्थ होंगे। मैंने तो उनके १२३वें जन्मदिवस पर एक स्थालीपुलाकन्यायेन परिचय मात्र प्रदान किया है। उनका शतपथ का भाष्य प्रथम–द्वितीय–तृतीय काण्ड तथा उसकी भूमिका के रूप में शतपथ में एक पथ व अद्भुत कुमारसम्भव आदि रचनाएँ प्राचीन ऋषियों के वेदव्याख्या के मर्म को उद्घाटित करती हैं। इस अवसर पर हम ऋषि दयानन्द के भाष्यों के कवचरूप में उनके पञ्चयज्ञप्रकाश, गीताभाष्य, शतपथ–ब्राह्मणभाष्य, ऋग्वेदमण्डलमणिसूत्र एवं कायाकल्प आदि ग्रन्थों का अध्ययन, मनन, चिन्तन करें तो वैदिक साहित्य को समझने में वैदिक आलोक का कार्य करेंगे।

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित ऋषि मेले में आप सभी आमन्त्रित हैं।

१६, १७, १८ नवम्बर २०१८, **सम्पर्क**– ०१४५–२४६०१६४

पृष्ठ संख्या ६ का शेष भाग पर....

कर दिया। रियासत आर्यसमाज के कार्यों में रोड़ा बन खड़ी हो गयी। हर कार्य में बाधा उत्पन्न की जाने लगी। १९१४ में अत्याचार चरम सीमा पर पहुँच गए तो शाहपुरा नरेश उम्मेदसिंह व कुंवर चान्दकरण शारदा के हस्तक्षेप से इस मामले को शान्त कराने का निष्फल प्रयास किया गया। अंग्रेजी सत्ता के सन्मुख निज गौरव, स्वाभिमान गिरवी रख नतमस्तक रियासत को स्वतन्त्रता हेतु प्राणोत्सर्ग के लिए तत्पर ये ऋषि दयानन्द के सिपाही आँखों में शूल की तरह चुभ रहे थे।

अंग्रेजों के प्रति भक्ति और निज धर्म को भय और लालच हेतु तिलांजलि दे मुसलमान बने सलाहकारों के हाथों की कठपुतली बने शासक ने आर्यसमाज को बंद करा दिया।

आर्यसमाज को बंद करने से ही भला धौलपुर रियासत नरेश उदयभानु और काजी अजीउद्दीन अहमद की आत्मा को कहाँ तृप्ति मिलने वाली थी, अत: आर्यसमाज मंदिर को शौचालय में परिवर्तित कर दिया गया। विश्व इतिहास में ऐसा उदाहरण मिलना कठिन ही है। हतभाग्य! रियासत नरेश कैसे नीति, शीलता, धर्म का परित्याग कर अंग्रेजों और मुसलमान काजियों के हाथों खेलकर अपने ही धर्मप्रेमी बंधुओं पर अत्याचार करने में संलग्न था और ईश्वर की उपासना, देश की स्वतन्त्रता जैसे पवित्र कार्य के लिए चयनित स्थान को शौचालय में परिवर्तित कर दिया गया।

इस अमानवीय कार्य के समाचार देशभर में फैलते ही आर्य जनसमूह में आक्रोश फैलना स्वाभाविक था और परिणामस्वरूप एक वर्ष पूर्व ही महात्मा मुंशीराम से स्वामी श्रद्धानन्द बने अग्निपुञ्ज को इस अनैतिक कार्य के विरोध के लिए धौलपुर आना पड़ा।

स्वामी श्रद्धानन्द जी के नेतृत्व में १९१९ में धौलपुर में आन्दोलन किया गया।

धौलपुर नरेश उदयभानु और उसके काजी अजीउद्दीन अहमद ने इस आन्दोलन को निष्क्रिय करने के लिए पूरा प्रयास किया और स्वामी श्रद्धानन्द जी पर पत्थरों की बारिश कर दी गयी। स्वामी श्रद्धानन्द जी के मस्तक पर चोट आयी। रुधिररञ्जित स्वामी श्रद्धानन्द जी को उपचार के लिए ले जाया गया। स्वामी श्रद्धानन्द जी पर हुए इस हमले की सूचना मिलते ही आर्य जाति में शौचालय बनाने जैसे कृत्य को लेकर उफान पर चढ़ा क्रोध सभी बन्धनों को तोड़ने लिए लिए मानों टूट पड़ना चाहता था और स्वदेश, स्वतन्त्रता, स्वधर्म के गले पर छुरी चलाने वाली सत्ताओं को उखाड़ फेंकने के लिए शूरता और बलिदान देने के लिए तत्पर था।

स्थिति को भाँपकर अंग्रेजी सत्ता और धौलपुर रियासत नरेश उदयभानु को स्वामी श्रद्धानन्द और आर्य जनता के सामने झुकते हुए आर्यसमाज के लिए स्थान निर्धारित करने के लिए बाध्य होना पड़ा।

आइये, इस गौरवमय इतिहास को याद कर श्रद्धेय जिज्ञासु जी की प्रेरणा से पण्डित लेखराम मिशन द्वारा आयोजित 'धौलपुर सत्याग्रह शताब्दी यात्रा' का अंग बनें।

इस यात्रा का आरम्भ १७ अगस्त को अजमेर से होगा १८ अगस्त का कार्यक्रम भरतपुर शहर में होगा एवं १९ अगस्त को धौलपुर में भव्य शोभायात्रा और कार्यक्रम का आयोजन किया जायेगा तथा २० अगस्त को बाड़ी धौलपुर में कार्यक्रम की समाप्ति होगी।

कार्यक्रम के बारे में अधिक जानकारी के लिए आचार्य श्री रामनिवास गुणग्राहक (९०७९०३९०८८) श्री गौरव आर्य (८२०९७५५००४) एवं श्री लक्ष्मण जिज्ञासु (९८११३५४६४१) से संपर्क किया जा सकता है।

वृष्टि यज्ञ प्रारम्भ

परोपकारिणी सभा और स्वामी हृदयराम जी द्वारा स्थापित जीव सेवा समिति के संयुक्त तत्त्वावधान में प्रतिवर्ष होने वाला वृष्टि यज्ञ २८ जून को प्रारम्भ हो गया है। जीव सेवा समिति के यज्ञ संयोजक श्री घनश्याम जी ने बताया कि यह वृष्टि यज्ञ पिछले २६ वर्षों से निरन्तर हो रहा है। दैनिक यज्ञ के पश्चात् प्रात: ८ से ९ बजे तक प्रतिदिन रक्षाबन्धन तक होने वाले इस यज्ञ में महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल के ब्रह्मचारी अथर्ववेद के वृष्टि सूक्त के मंत्रों से आहुतियाँ दिलवा रहे हैं।

आर्यजगत् के समाचार

१. वार्षिकोत्सव एवं दीक्षान्त समारोह सम्पन्न- आर्य कन्या गुरुकुल शिवगंज का २०वाँ वार्षिकोत्सव एवं तृतीय दीक्षान्त समारोह ८, ९, १० जून २०१८ को बड़े ही धूमधाम व हर्षोल्लास पूर्वक सम्पन्न हुआ। समारोह में तीनों दिन प्रातः ब्रह्मयज्ञ एवं अग्निहोत्र यज्ञ हुए। विशेष आहुतियाँ अथर्ववेद के मन्त्रों से दी गईं। समारोह में विशेष अतिथि स्वामी सुमेधानन्द सरस्वती, श्री आर्येशानन्द सरस्वती पिण्डवाड़ा, श्री ओम्मुनि ब्यावर, श्रीमती ज्योत्स्ना धर्मवीर, अजमेर, श्री डॉ. सोमदेव शास्त्री, डॉ. सुदक्षिणा शास्त्री मुम्बई, पं. अशोक आर्य ग्वालियर, श्री रघुमन्ना हैदराबाद आदि रहे।

२. वार्षिकोत्सव सम्पन्न- उ. प्र. जनपद बदायूँ में स्थित आर्यसमाज गुधनी का १०४ वाँ वार्षिकोत्सव दिनांक ३१ मई से ४ जून तक हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न हुआ। आचार्य संजीव रूप के निर्देशन में ६१ कुण्डीय यज्ञ २५०किलोग्राम गौघृत व तीन क्विंटल सामग्री से होम किया गया तथा २२१ वृक्ष लगवाए गए। इससे पूर्व १० दिन का आर्य वीरांगना दल व आर्यवीर दल का शिविर लगाया गया। समारोह में आर्य कवि सम्मेलन भी आयोजित किया गया।

३. प्रवेश प्रारम्भ- गुरुकुल संस्कृत महाविद्यालय शुक्रताल, मुजफ्फरनगर उ.प्र. में प्रवेश प्रारम्भ है। यहाँ संस्कृत भाषा के साथ-साथ आधुनिक विषयों जैसे-अंग्रेजी, गणित, इतिहास, भूगोल एवं अर्थशास्त्र आदि विषयों का अध्यापन सुयोग्य अध्यापकों के द्वारा कराया जाता है। प्रतिदिन प्रातः एवं सायं सन्ध्या हवन एवं यौगिक क्रियायें करायी जाती हैं। छात्रावास उपलब्ध है। यहाँ पर मध्यमा स्तर की परीक्षाएं उ.प्र. माध्यमिक संस्कृत शिक्षा परिषद लखनऊ तथा महाविद्यालय स्तर का पाठ्यक्रम सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी द्वारा संचालित है। संस्था में प्रवेश के लिए छात्र को ५ वीं कक्षा उत्तीर्ण होना अनिवार्य है। **आवश्यकता**- विद्यालय में दो रसोइये, एक वार्डन, एक क्लर्क तथा संस्कृत संस्थान के मानदेय पर तीन संस्कृत अध्यापक व दो आधुनिक विषय के अध्यापकों की आवश्यकता है। सम्पर्क- ९९९७४३७९९०

४. आवश्यकता- आर्यसमाज लाला लाजपतराय चौक, नागौरी गेट, हिसार, हरियाणा के लिये एक सुयोग्य पुरोहित की आवश्यकता है, जो यज्ञ एवं संस्कार आदि सम्पादन में योग्यता रखता हो एवं विद्वान् हो। निवास की व्यवस्था आर्यसमाज की ओर से रहेगी। इच्छुक सज्जन सम्पर्क करें। उचित मानदेय। सम्पर्क- ९८१२१२५८८३, ०१६६२-२३३३३१

५. आर्य पुरोहित प्रशिक्षण शिविर- आर्य प्रतिनिधि सभा, बंगाल एवं आर्यसमाज कलकत्ता के संयुक्त तत्त्वावधान में आर्यसमाज कलकत्ता में ३ जून से १० जून २०१८ तक आर्य पुरोहित प्रशिक्षण शिविर लगाया गया। आर्य प्रतिनिधि सभा, बंगाल के प्रधान श्री श्रीराम आर्य ने शिविर को सम्बोधित किया।

६. शिविर सम्पन्न- सार्वदेशिक आर्यवीर दल, हरियाणा के आशीर्वाद एवं नेतृत्व में आर्यवीर दल, सोनीपत की ओर से स्थानीय डी.ए.वी. स्कूल सैक्टर-१५ सोनीपत में ३ जून रविवार से १० जून रविवार तक युवा चरित्र निर्माण एवं व्यायाम प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया। सोनीपत दिल्ली, नोएडा एवं निकटवर्ती ग्रामों के विद्यालयों के छठी से स्नातक स्तर के छात्रों, उदीयमान युवाओं की शताधिक संख्या ने शिविर में लाभ प्राप्त किया।

७. आर्य महासम्मेलन सम्पन्न- जिला आर्य उपप्रतिनिधि सभा भरतपुर के तत्त्वावधान में २२ वाँ वार्षिक आर्य महासम्मेलन एवं विश्व शान्ति यज्ञ २ जुलाई को भरतपुर स्थित गायत्री रिसॉर्ट सारस चौराहा पर मनाया गया। यज्ञ के ब्रह्मा आचार्य सत्यप्रिय, मथुरा थे।

८. आवश्यकता- आर्यसमाज गोरखपुर, जबलपुर म.प्र. को पुरोहित की शीघ्र आवश्यकता है। समुचित मानदेय एवं निवास प्रदान किया जाएगा। सम्पर्क करें- ८९८९८२८१४३, ०९७५४६९४३०५

९. शिविर सम्पन्न- सार्वदेशिक आर्यवीर दल का विशाल युवा चरित्र निर्माण, व्यक्तित्व विकास, आत्मरक्षा एवं व्यायाम का १० दिवसीय प्रान्तीय प्रशिक्षण शिविर दिनांक २३ मई से १ जून २०१८ तक आर्यसमाज भरुवा सुमेरपुर के अन्तर्गत श्री गायत्री विद्या मन्दिर इण्टर कॉलेज में सफलापूर्वक सम्पन्न हुआ। प्रदेश के ४५ जनपदों से ३९६ युवकों ने प्रशिक्षण प्राप्त किया। सार्वदेशिक आर्य वीर दल के प्रधान संचालक डॉ. स्वामी देवव्रत सरस्वती का भी सानिध्य प्राप्त रहा।

१०. विश्व योग दिवस मनाया- विश्व योग दिवस २१ जून २०१८ पर डॉ. अभयमित्र आर्य ने ग्राम यमलार्जुनपुर केसरगंज बहराइच (उ.प्र.) में कार्यक्रम का आयोजन किया, जिसमें

विभिन्न आसनों का अभ्यास किया गया। कार्यक्रम में आर्यसमाज यमलार्जुनपुर केसरगंज बहराइच (उ.प्र.) आर्यकुल योगपीठ के कार्यकत्ताओं का योगदान रहा। कार्यक्रम में मुख्य अतिथि श्री उमाकान्त मिश्र, श्री उमाप्रसाद, श्री त्रिवेणीप्रसाद, श्री शिवनारायण, श्री कर्मचन्द पटेल सहित कई लोगों ने अपने विचार रखे।

वैवाहिक

११. वर चाहिये- आर्य परिवार, संस्कारित, जन्म- १२ मई १९९२, कद- ५ फुट ६ इंच., शिक्षा- बी.टेक, हिन्दुस्तान ऐरोनोटिक्स में मैनेजर युवती हेतु आर्यसमाजी परिवार का समकक्ष संस्कारित युवक चाहिए। **सम्पर्क- ८३६८५०८३९५, ९४५६२७४३५०**

१२. वधू चाहिये- आर्य परिवार, संस्कारित, आयु- २८ वर्ष, कद- ५ फुट ८ इंच., शिक्षा- एम.बी.ए., प्रोफेसर, व्यापार में संलग्न युवक हेतु आर्यसमाजी परिवार की समकक्ष संस्कारित युवती चाहिए। **सम्पर्क- ९४५६८०४६६६**

चुनाव समाचार

१३. आर्यसमाज मल्हारगंज इन्दौर मध्यप्रदेश के चुनाव में **प्रधान**- डॉ. दक्षदेव गौड़, **मन्त्री**- डॉ. विनोद आहलुवालिया, **कोषाध्यक्ष**- ठाकुर हरिसिंह आर्य को चुना गया।

१४. आर्यसमाज केसरगंज, अजमेर के चुनाव में **प्रधान**- श्री रासासिंह, **मन्त्री**- श्री चन्दराम आर्य, **कोषाध्यक्ष**- डॉ. भागचन्द गर्ग को चुना गया।

१५. आर्यसमाज गोरखपुर के चुनाव में **प्रधान**- श्री प्रकाश चन्द्र सोनी, **मन्त्री**- श्री अनूप गायकवाड़, **कोषाध्यक्ष**- श्री वेदामृत गारी को चुना गया।

१६. आर्यसमाज शहर बड़ा बाजार सोनीपत के चुनाव में **प्रधान**- श्री वेदप्रकाश आर्य, **मन्त्री**- श्री प्रवीण आर्य, **कोषाध्यक्ष**- श्री सुभाष रहेजा को चुना गया।

१७. आर्यसमाज धौलपुर, राज. के चुनाव में **प्रधान**- डॉ. लाजपति शर्मा, **मन्त्री**- श्री राजू भगत, **कोषाध्यक्ष**- श्री चन्द्रमोहन प्रेगोरिया को चुना गया।

१८. महिला आर्यसमाज धौलपुर, राज. के चुनाव में **प्रधाना**- डॉ. मधु गर्ग, **मन्त्री**- श्रीमती शारदा आर्या को चुना गया।

१९. आर्यसमाज कोटा, राज. के चुनाव में **प्रधान**- श्री गुमानसिंह आर्य, **मन्त्री**- श्री मनीष आर्य, **कोषाध्यक्ष**- श्री मनु सक्सेना को चुना गया।

शोक समाचार

२०. ओडिशा एवं छत्तीसगढ़ में विगत ५० वर्षों से आर्यसमाज के प्रचारक **श्री रणजीत आर्य** का ८ जून २०१८ को देहावसान हो गया। उनका अंन्तिम संस्कार वैदिक विधि-विधान से आचार्य बृहस्पति द्वारा किया गया। १८ जून २०१८ को शान्ति यज्ञ किया गया, जिसमें आर्यजगत् के संन्यासी, वानप्रस्थी, गुरुकुल के स्नातक एवं विद्वान् उपस्थित थे। सभी ने दिवंगत आत्मा को श्रद्धांजलि दी।

२१. १८ जून २०१८ सोमवार प्रातः **श्रीमती चन्द्रकान्ता आर्या** शिवाजी नगर गुरुग्राम निवासी का देहावसान हो गया। वे जीवन भर आर्यसमाज की एक निष्ठावान सदस्य रहीं। उनकी इच्छानुसार उनकी देह को आर्मी मैडिकल कॉलेज दिल्ली छावनी को समर्पित किया। परोपकारिणी सभा अजमेर परिवार के सभी सदस्य हार्दिक शोक व्यक्त करते हुए दिवंगत आत्मा की सद्गति की प्रार्थना करते हैं।

२२. आर्यसमाज ग्रेटर कैलाश-२ दिल्ली के संरक्षक श्री प्रियव्रत आर्य की धर्मपत्नी **श्रीमती शकुंतला व्रत** का दिनांक १८ अप्रैल २०१८ को आकस्मिक निधन हो गया। आप ७७ वर्ष की आयु में भी आर्यसमाज के प्रत्येक कार्य में बड़े ही उत्साह से सहयोग करती थीं। निधन से पूर्व भी जब प्रियव्रत आर्य उनसे चिकित्सालय में मिलने गए तो उनसे आर्यसमाज में होने वाले यज्ञ का समय पूछा और कहा कि आपको तो इस समय यज्ञ में होना चाहिये था, आप आर्यसमाज जाइये। आर्य विद्वानों के भोजन आदि की व्यवस्था वह बड़ी श्रद्धा से करती थीं।

२३. गत ०६-०७-२०१८ की रात्रि अमृतसर के व्यवसायी एवम् आर्यसमाज शक्ति नगर अमृतसर के मन्त्री श्री राकेश मेहरा के पूज्य पिता **श्री राधेश्याम मेहरा** का स्वर्गवास हो गया। उनकी अन्त्येष्टि क्रिया ०७-०७-२०१८ को पूर्ण वैदिक रीति द्वारा करवाई गई। उन्होंने सारा जीवन सादगी और उच्च आदर्शों का पालन करते हुए व्यतीत किया। श्री राधेश्याम जी अपने पिता स्व. महाशय जगदीश राज द्वारा प्रेरित होकर आर्यसमाज के अन्दोलन से आजीवन जुड़े रहे।

२४. संस्कृत साहित्य के विद्वान् एवं कवि अनेक पुस्तकों के लेखक, गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक, राजस्थान विश्वविद्यालय के संस्कृत विभागाध्यक्ष **डॉ. सुभाष वेदालंकार** का दिनांक ६ जुलाई २०१८ को निधन हो गया है। दिनांक ९ जुलाई को श्रद्धाञ्जलि सभा की गई। आर्य जगत् एक विद्वान् को खोकर शोक संतप्त है।

परोपकारी परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।

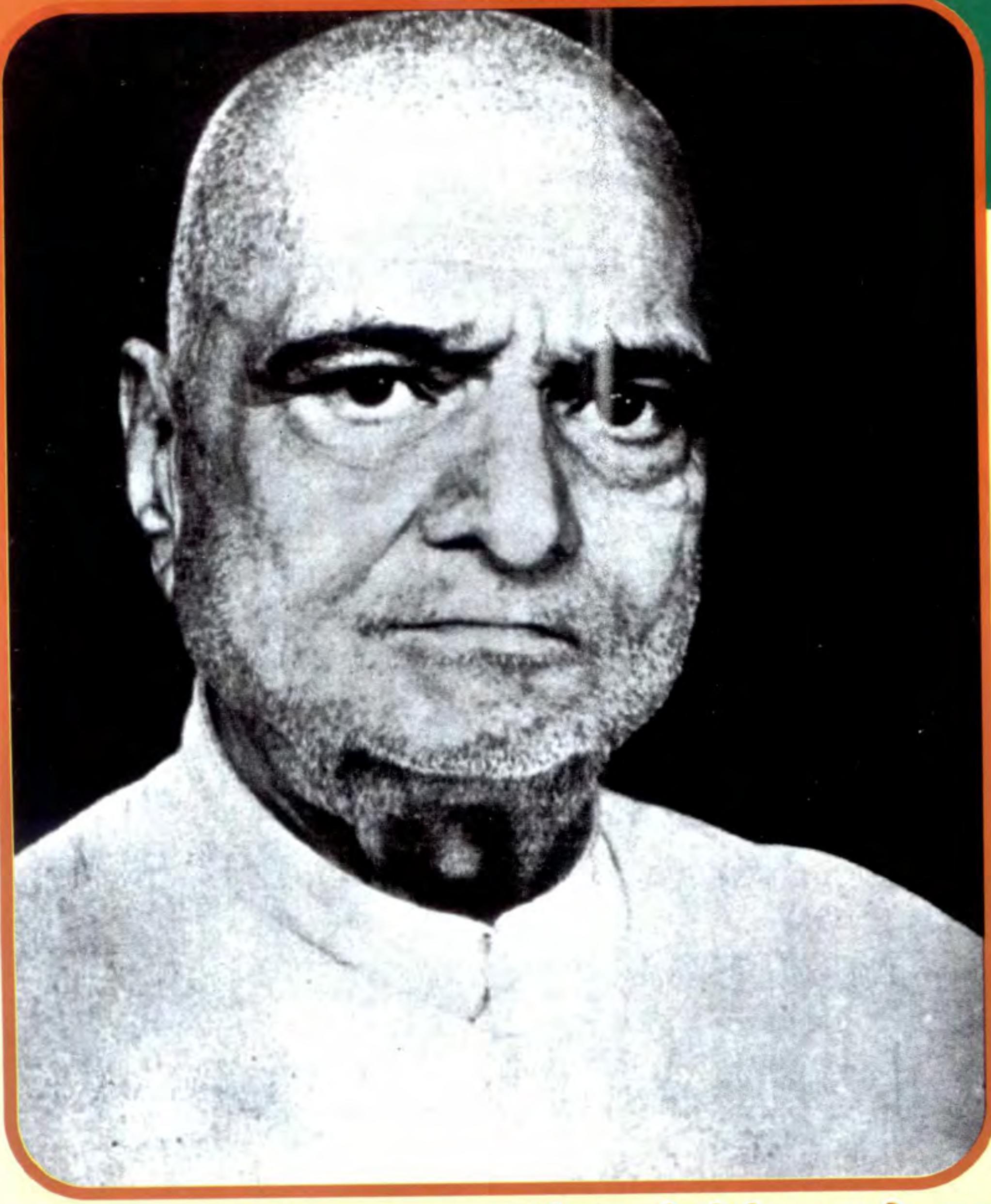

शतपथ ब्राह्मण के भाष्यकार, शास्त्रार्थ महारथी, विविधशास्त्रनिष्णात
अद्वितीय वक्ता, गुरुकुल प्रभात आश्रम-मेरठ के संस्थापक

पण्डित बुद्धदेव विद्यालङ्कार

(स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती)

जन्म - १ अगस्त १८९५ | मृत्यु - १४ जनवरी १९६९

आर जे/ए जे/80/2018-2020 तक
प्रेषण : ३०-३१ जुलाई, २०१८ आर.एन.आई. ३९५९/५९

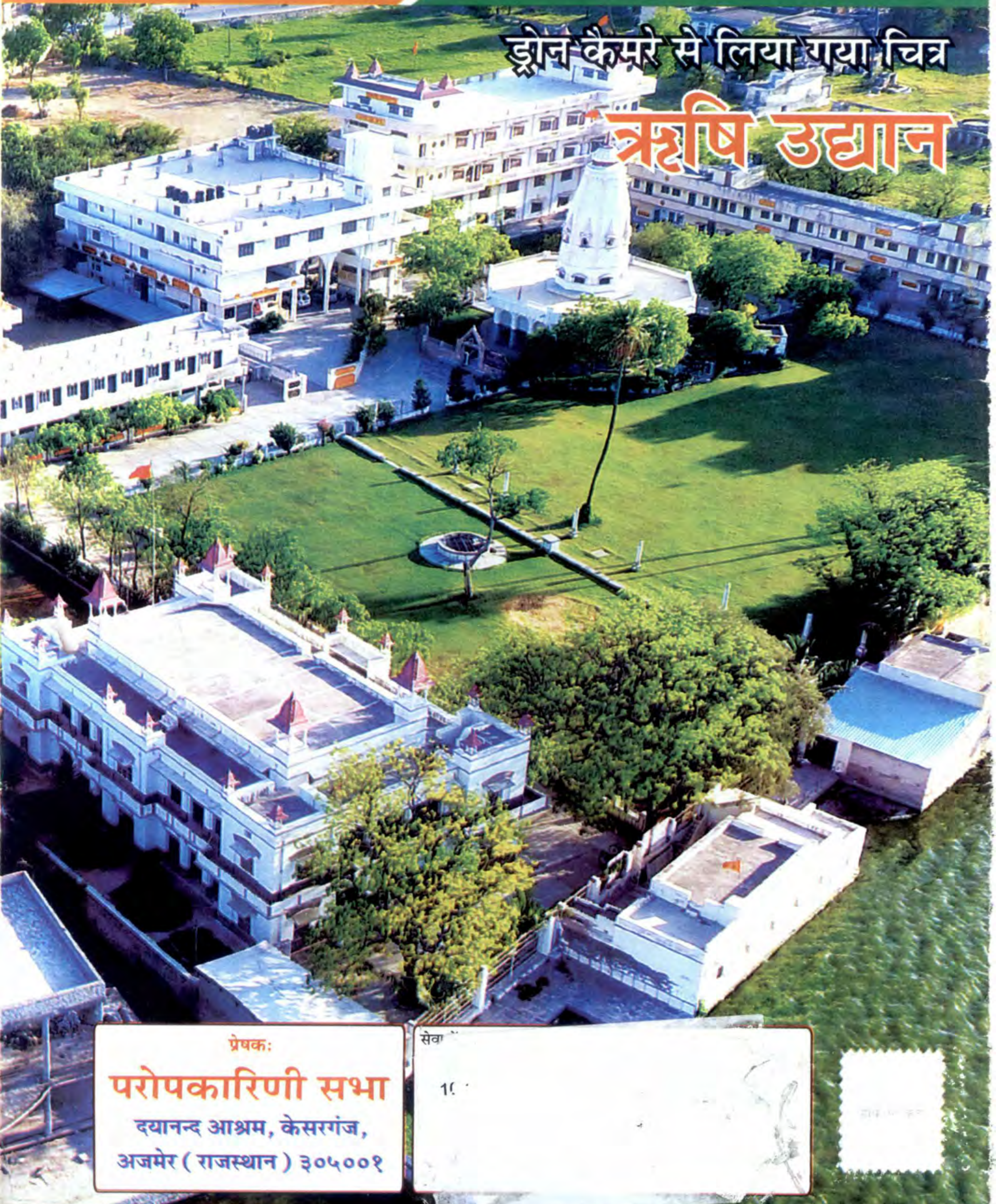

प्रेषकः
परोपकारिणी सभा
दयानन्द आश्रम, केसरगंज,
अजमेर (राजस्थान) ३०५००१